All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI - PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 03-08-2026 • Vol.2 No.31 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • M. 90410-14575 • Page 12

भिंडी की वैज्ञानिक खेती

उन्नतशील प्रजातियां :

वर्षा उपहार : यह प्रजाति यलो वेन मौजे़क विषाणु रोग रोधी है। पौधे मध्यम ऊंचाई वाले (90-120 सैंटीमीटर) तथा इनके इंटर नोड पास-पास होते है। पौधों में 2-3 शाखाएं प्रत्येक नोड से निकलती हैं। पत्तियों का रंग गहरा हरा, निचली पत्तियां चौड़ी तथा छोटे-छोटे लोब्स वाली एवं ऊपरी पत्तियां बड़ी लोब्स वाली होती हैं। वर्षा ऋतु में 40 दिनों में फूल निकलने शुरू हो जाते हैं तथा फल 7 दिनों बाद तोड़े जा सकते हैं। फल चौथी-पांचवीं गांठों से पैदा होते हैं। औसत पैदावार 9-10 टन प्रति हैक्टेयर होती है। इसकी खेती ग्रीष्म ऋतु में भी कर सकते हैं। इसकी जाति को चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार ने विकसित किया है। इसे पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में उगाने की संस्कृति की जाती है।

पूसा ए-4 : यह प्रजाति भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा निकाली गई है। यह प्रजाति येलो वेन मौजे़क विषाणु रोग रोधी है। यह एफिड तथा जैसिड के प्रति सहनशील है। इसके फल गहरे हरे तथा 12-15 सैंटीमीटर लम्बे होते हैं। पहली तुड़ाई 45 दिनों बाद शुरू हो जाती है। औसत पैदावार 12-15 टन प्रति हैक्टेयर होती है। यह प्रजाति वर्षा तथा गर्मियों दोनों समय में उगाई जाती है।

अर्का अनामिका : यह प्रजाति भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बैंगलोर द्वारा निकाली गई है। यह प्रजाति येलो वेन मौजे़क विषाणु रोग रोधी है। इसके पौधे ऊंचे (120-150 सैंटीमीटर) सीधे तथा अच्छी शाखा युक्त होते हैं।

फल 20 सैंटीमीटर लम्बे तथा मध्यम आकार के होते हैं। फल रोम रहित, मुलायम, गहरे हरे तथा 5-6 धारियों वाले होते हैं। यह प्रजाति दोनों ऋतुओं में उगाई जा सकती है। पैदावार 12-15 टन प्रति हैक्टेयर हो जाती है। यह प्रजाति उत्तर भारत की अपेक्षा दक्षिण भारत में अच्छी पैदावार देती है।

अर्का अभय : यह प्रजाति येलो वेन मौजे़क विषाणु रोग रोधी है। इसके पौधे ऊंचे 120-150 सैंटीमीटर सीधे तथा अच्छी शाखा युक्त होते हैं।

हिसार उन्नत : पौधे मध्यम ऊंचाई 90-120 सैंटीमीटर वाले तथा इंटर-नोड पास-पास होते हैं। पौधों में 3-4 शाखाएं प्रत्येक नोड से निकलती हैं। पत्तियों का रंग हरा होता है। पहली तुड़ाई 46-47 दिनों बाद शुरू हो जाती है। औसत पैदावार 12-13 प्रति हैक्टेयर होती है। फल 15-16 सैंटीमीटर लम्बे, हरे तथा आकर्षक होते हैं। यह प्रजाति वर्षा तथा गर्मियों दोनों समय में उगाई जाती है।

वी.आर.ओ. : यह प्रजाति पीत शिरा मौजे़क एवं प्रारंभिक पत्ती मोड़ विषाणु से पूर्णतया अवरोधी है। इसमें फूल 38 से 40 दिनों में चौथे से छठवें गांठ पर आ जाते हैं। इसकी पैदावार गर्मी के दिनों में 135 क्विंटल तथा बरसात की फसल में 180 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

पूसा सावनी : यह गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली किस्म है। इसके पौधे लम्बे, तने व पत्तों के डंठल पर बैंगनी रंग के धब्बे होते हैं। फल 6 से 7 गांठ पर लगने शुरू हो जाते हैं। फल हरे तथा चिकने होते हैं। यह किस्म 50 दिनों में फल देना शुरू कर देती है। औसत पैदावार तथा ग्रीष्मकालीन फसलों के लिए क्रमश: 70 तथा 75 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

एच.बी.एच.-142 : यह एक संकर किस्म है। पीलीया रोग रोधी क्षमता होने के कारण यह वर्षा ऋतु में उगाए जाने के लिए उपयुक्त हैं। इसके पौधे दो गांठों के बीच की कम दूरी व मध्यम लम्बाई के होते हैं। इसकी पत्तियां हस्ताक्षर कटी हुई व हरे रंग की होती है। इसके फल 8-10 सैंटीमीटर लम्बे, मध्यम मोटाई व पांच कोर युक्त आकर्षित होते है तथा तीसरी व चौथी गांठ से लगने शुरू होते है। यह किस्म 47-48 दिन में फल देना शुरू करती है। इसकी औसतन पैदावार 130 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

हिसार नवीन : यह किस्म पीलिया रोग रोधी होने के कारण वर्षा ऋतु में उगाए जाने के लिए उपयुक्त है। इसके पौधे 3-4 शाखा युक्त व दो गांठों के बीच की दूरी कम रखने वाले होते है। इसके फल हरे, आकर्षित, पांच कोरों युक्त मध्यम लम्बाई व मोटाई वाले होते है। यह किस्म बोने के 46-47 दिन उपरांत फल देना आरम्भ कर देती है। इसकी औसत उपज 100-115 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

परमनी क्रांति : फल पूसा सावनी जैसे ही होते हैं। औसत उपज 100-125 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। पीतसिरा अवरोधी किस्म है।

अन्य किस्में : पंजाब पद्मिनी, संकर गंगा, को-3

बुवाई का समय :

1. उत्तर भारत : फरवरी और जुलाई माह।

2. पूर्वी व दक्षिणी भारत : संपूर्ण वर्ष (प्रत्येक माह में)

बीज की मात्रा :

1. 7-10 किलो प्रति हैक्टेयर (वर्षा ऋतु में)

2. 12-15 किलो प्रति हैक्टेयर (ग्रीष्म ऋतु में)

खाद एवं उर्वरक :

* 50 टन गोबर की सड़ी खाद खेत की तैयारी के समय।

* 125 किलोग्राम कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट, 200 किलोग्राम सुपर फास्फेट तथा 50 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश खेत की अंतिम तैयारी के समय।

* 125 किलोग्राम कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट को दो बार में पहली बार बुवाई के एक माह बाद तथा दूसरी बार फल आते समय।

बुवाई : ग्रीष्म ऋतु में बीजों को एक रात पानी में भिगो कर बोते हैं। अच्छी नमी वाले खेत में हल के पीछे बुवाई कर सकते हैं। गर्मी की फसल को मेड़ों पर बोना अच्छा होता है। बीज वाली फसल के लिए 200 मीटर की अलगाव दूरी रखनी चाहिए।

दूरी :

* ग्रीष्म ऋतु में : 30 सैंटीमीटर × 20 सैंटीमीटर

* वर्षा ऋतु में : 45 सैंटीमीटर × 30 सैंटीमीटर

* बीज वाली फसल के लिए : 60 सैंटीमीटर × 45 सैंटीमीटर

सिंचाई एवं अन्त: कृषि क्रियाएं : सिंचाई आवश्यकता अनुसार तथा 2-3 बार गुड़ाई ज़रुर करते हैं। मौजे़क के रोग ग्रसित पौधों को देखते ही निकाल देना चाहिए। खरपतवारनाशी जैसे बैसालीन 2 से 2.5 लीटर प्रति हैक्टेयर बुवाई के 4-5 दिन पहले मिट्टी में अच्छी तरह मिला देते हैं। यदि बैसालीन ना उपलब्ध हो तो लासो 5 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई से एक दिन बाद छिड़काव करें। यदि खरपतवार अधिक हों, तो बुवाई के 60 दिनों पश्चात् एक गुड़ाई आवश्यक होती है। बायोअल्जीन का 2 मिलीलीटर की दर से छिड़काव करने से पौधे अच्छी तरह से बढ़ते है और अधिक पैदावार देते हैं। बीज वाली फसल

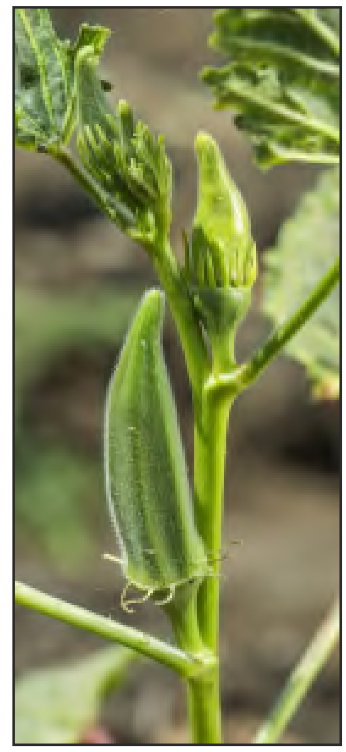

के रोगींग द्वारा खराब पौधे फूल आने से पहले निकाल देना चाहिए।

पौध संरक्षण :

भिंडी की जड़-सड़न बीमारी :

* इसके लिए बीज शोधन (सीड ट्रीटमेंट) बाविस्टिन नामक दवा से 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखाई देने पर बाविस्टिन 1 ग्राम एक लीटर पानी में घोल बना कर पौध के आस-पास की मिट्टी को पूरी तरह भिगो दें।

* बीज बोने से पहले खेत में ट्राइकोडरमा विरीडी फफूंद 5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से 100 किलोग्राम खाद के साथ मिला कर ज़मीन में मिला देना चाहिए।

* झुलसा रोग से बचने के लिए इंडोथेन एम-45 का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में या बाविस्टिन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिला कर घोल का छिड़काव करें।

पीतसिरा मौजे़क : इस बीमारी के नियंत्रण के लिए मैटासिस्टॉक्स या मैलाथियान नामक कीटनाशी दवा 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें। पत्ती की निचली सतह पर सफेद पाउडर दिखाई पड़े तो घुलनशील गंधक 2 ग्राम प्रति लीटर का या केराथेन अथवा कैलिक्सीन 0.5 मिलीलीटर का घोल बना कर छिड़काव करें।

जैसिड : इस कीट के नियंत्रण के लिए बुवाई के समय फोरेट (10जी) 10 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में मिला देना चाहिए। क्लोरोपायरीफॉस 2 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से पानी में मिला कर छिड़काव करें। इमिडाक्लोप्रिड से बीज उपचार 5 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बीज बनाने वाली फसल में देना उचित है। नीम युक्त कीटनाशी से बीज उपचार 5 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बीज बनाने वाली फसल में देना उचित है। नीम युक्त कीटनाशी ऍसाडिरॅक्टीन 1500 पी.पी.एम. का 4 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से पानी में मिला कर छिड़काव करें।

तना एवं फल छेदक कीट : इस कीट से फसल बचाने के लिए कीट-पतंगों को आकर्षित करने के लिए फेरोमोन ट्रेप्स (इरविट ल्यूर एवं हेलील्यूर) का इस्तेमाल पौधों में फूल आते समय करें। कीटों द्वारा फैलाने वाले वायरस अर्थात् विषाणु बीमारी के नियंत्रण के लिए एन.पी.वी. को 250 एल.ई. प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। इसके अलावा क्लोरोपायरीफॉस 35 ई.सी. 2 मिलीलीटर प्रति लीटर या साइपरमेथ्रिन (10 ई.सी.) 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करने से कीटों का नियंत्रण होता है।

सावधानियां :

* दवा छिड़कने से पहले फलों की तुड़ाई करें।

* छिड़काव के बाद 10-15 दिनों तक फलों का सब्ज़ी के लिए उपयोग ना करें।

तुड़ाई : हर तीसरे दिन मुलायम फलों को तोड़ते रहना चाहिए, क्योंकि कड़ा होने पर उसमें रेशे की मात्रा बढ़ जाती है। फूल खिलने के 5 से 7 दिन बाद फल तोड़ने लायक हो जाते हैं। बीज के लिए फल पूर्ण तैयार होकर फटने लगें, तब तुड़ाई करें। फलों को पूरी तरह सुखा कर बीज निकालें। अच्छे गुणवत्ता वाले बीज में अंकुरण क्षमता कम से कम 65 प्रतिशत होनी चाहिए।

बीजोत्पादन :

दूरी : 60 सैंटीमीटर × 45 सैंटीमीटर

अलगाव दूरी : भिंडी में पर-परागण होता है। अत: जब दो जातियों का बीज पैदा करना हो तो उनके बीच में कम से कम दूरी 200 मीटर की दूरी होनी चाहिए।

खराब पौधों की छंटाई : रोग ग्रसित एवं उन पौधों को जो उस जाति से भिन्न दिखाई पड़ें, जिसका बीज बनाया जा रहा है, फूल आने से पहले ही निकाल देना चाहिए। फलों के आकार और रंग के आधार पर छंटाई करनी चाहिए। पीतसिरा मौजे़क पौधों को निकाल कर खत्म कर देना चाहिए।

कटाई एवं बीज की सफाई : जब फली का रंग भूरा हो जाए, तो तुड़ाई करनी चाहिए। फली को धूप में अच्छी तरह पूरा सुखा कर फली को हाथ से तोड़ कर या लकड़ी से पीट कर बीज निकालना चाहिए। पहले तीन फल हरे तोड़ने चाहिए, जिससे अधिक फल आएं। आखिर के 2-3 फलों का भी बीज नहीं लेना चाहिए। 3 से लेकर 8वें इंटरकोड पर लगे फलों से अधिक बीज की गुणवत्ता भी अच्छी आती है। कीड़ों से ग्रसित फलों का बीज भी नहीं लेना चाहिए।

उपज : 10-12 क्विंटल बीज प्रति हैक्टेयर।

धान की पत्ती लपेट (लीफ फोल्डर) कीट के नियंत्रण हेतु कांटेदार टहनियां (Thorn Sticks) चलाने का प्रभाव

ललिता, सुमित सैनी, प्रवेश कुमार, महावीर सिंह, राकेश कुमार, चरण सिंह, सुखम मदान व आशीष जैन, सहायक वैज्ञानिक और विशाल गांधी व अमित कुमार, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, धान अनुसंधान संस्थान, कौल (कैथल)
मीनू, कृषि विज्ञान केंद्र, भिवानी

धान की फसल में पत्ती लपेटक (लीफ फोल्डर) कीट के नियंत्रण के लिए कांटेदार टहनियां या झाड़ियां फसल के ऊपर से

चलाना एक पारंपरिक एवं यांत्रिक (Mechanical) नियंत्रण विधि है। यह कम लागत वाली, पर्यावरण-अनुकूल तकनीक है, जिसे समेकित कीट प्रबंधन (IPM) के अन्य उपायों के साथ अपनाने पर बेहतर परिणाम प्राप्त होते हैं। धान की पत्ती लपेट कीट के प्रारंभिक प्रकोप की स्थिति में कुछ किसान फसल के ऊपर बबूल (कीकर), बेर अथवा अन्य कांटेदार झाड़ियों की टहनियां चलाकर मुड़ी हुई पत्तियों को खोलते हैं, जिससे उनमें छिपी सुंडियां बाहर निकल आती हैं, नीचे गिर जाती हैं अथवा प्राकृतिक शत्रुओं द्वारा नष्ट कर दी जाती हैं।

इस विधि में खेत की मेड़ों से बबूल (कीकर), बेर या अन्य कांटेदार झाड़ियों की ताजी टहनियां काटकर उन्हें 2-3 मीटर लंबी रस्सी से बांधा जाता है। इसके बाद दो व्यक्ति खेत के दोनों सिरों से रस्सी पकड़ कर टहनियों को धीरे-धीरे धान की फसल के ऊपर घसीटते हैं। यह कार्य प्रायः सुबह (ओस रहने पर) अथवा शाम के समय किया जाता है, जब पौधों में नमी अधिक होती है और पत्तियां आसानी से खुल जाती हैं, जिससे पौधों को कम क्षति पहुंचती है। आवश्यकता होने पर इस प्रक्रिया को 5-7 दिनों के अंतराल पर दोहराया जाता है, विशेषकर जब कीट का प्रारंभिक प्रकोप दिखाई देता है। कांटेदार टहनियों के घर्षण से कुछ सुंडियां कुचल जाती हैं या घायल होकर मर जाती हैं। हरियाणा में इस पारंपरिक विधि का उल्लेख किसानों के अनुभव एवं कृषि प्रसार गतिविधियों में मिलता है। इसकी प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

* सुंडियों का भोजन बाधित होने से नई पत्तियों की क्षति कम होती है तथा पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्षमता बनी रहती है।
* यह कार्य फसल की शाकीय (Vegetative) अवस्था में, जब पत्ती लपेटक कीट का प्रारंभिक प्रकोप दिखाई देता है, किया जाता है।
* यह विधि मुख्यतः छोटे खेतों में अपनाई जाती है, जहां श्रमिक आसानी से उपलब्ध होते हैं।
* कांटेदार टहनियों के फसल पर चलने से मुड़ी हुई पत्तियां खुल जाती हैं, जिससे उनमें छिपी सुंडियां बाहर निकल जाती हैं या

शेष पृष्ठ 8 पर

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 02 अंक : 31
तिथि : 03-08-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

सेहत के लिए फायदेमंद है 'मिलेट्स' का उपयोग

मिलेट्स का इतिहास एवं फायदे

भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र को प्रस्ताव दिया था कि साल 2023 को विश्व मिलेट्स वर्ष (International Year of Millets - IYOM) के रूप में घोषित किया जाए। भारत के इस प्रस्ताव को 72 देशों और युनाइटेड ने समर्थन दिया था, जिसके बाद राष्ट्र महासभा (UNGA) ने 5 मार्च, 2021 को घोषणा के बाद 2023 को विश्व मिलेट्स वर्ष (International Year of Millets) के रूप में मनाया गया।

भारत सरकार का उद्देश्य लोगों को मिलेट्स के बारे में ज्यादा जागरूक करना है, ताकि हर देश, इलाके के लोग इसे अपनी डाइट में शामिल करें और मिलेट्स के लिए किसानों को अच्छा बाज़ार और अच्छे रेट्स मिल सकें, परन्तु सबसे पहले यह जानना आवश्यक है कि मिलेट्स का इतिहास क्या है, इसमें कौन से अनाज शामिल हैं, जिन्हें हम 'सामूहिक' रूप से मिलेट्स (Millets) कहते हैं।

मिलेट्स का इतिहास : 'मिलेट्स' वास्तव में छोटे बीज वाली घासों का एक समूह है, जो व्यापक रूप से दुनिया भर में अनाज फसलों या मानव भोजन के लिए अनाज और चारे के रूप में उगाया जाता है। भारत में, कुछ सबसे पुराने यजुर्वेद ग्रंथों में इनका उल्लेख किया गया है।

50 साल पहले तक भारत में मिलेट्स जैसे बाजरा, ज्वार, रागी, कोदो, कुटकी आदि प्रमुख अनाज थे। लेकिन समय के साथ इनका महत्व खो गया और भारतीयों ने पश्चिमी देशों से प्रभावित होकर मिलेट्स को मोटे अनाजों और खासतौर पर ग्रामीण खाने के रूप में देखना शुरू कर दिया। जिस कारण इनकी खेती में भी

कमी आई और साथ ही किसानों की फसल के लिए बाज़ार भी घटे।

मिलेट्स के प्रकार : ICRISAT की एक रिपोर्ट के मुताबिक, मिलेट्स की दो प्रमुख श्रेणियां हैं : मेजर या मुख्य मिलेट्स और माइनर या छोटे मिलेट्स। बाजरा, ज्वार, रागी और कंगनी मुख्य मिलेट्स की श्रेणी में आते हैं और समा, कोदो, चिन्ना इत्यादि को मोटे मिलेट्स माना जाता है।

हर एक मिलेट का अपना महत्व है। जैसे कि बाजरा कैल्शियम से भरा होता है, ज्वार में पोटाशियम और फास्फोरस होता है और कंगनी में फाइबर होता है, जबकि कोदो आयरन से भरपूर होता है। इसलिए हमें सभी तरह के मिलेट्स खाते रहना चाहिए।

'सुपरफूड' और 'स्मार्टफूड' हैं मिलेट्स : कम पानी, उर्वरक और कीटनाशकों के साथ कम उपजाऊ मिट्टी में भी मिलेट्स को उगाया जा सकता है। उच्च तापमान में भी ये अच्छा ग्रो करते हैं और इसी कारण इन्हें 'क्लाइमेट स्मार्ट अनाज' कहा जाता है।

'मिलेट्स' सेहत के लिए बहुत ही फायदेमंद होते हैं। मिलेट्स में प्रोटीन, फाइबर, बी-विटामिन, कैल्शियम, आयरन, मैगनीज़, मैग्नीशियम, फास्फोरस, ज़िंक, पोटाशियम, कॉपर और सेलेनियम सहित बहुत से पोषक तत्व होते हैं। मिलेट्स एंटीऑक्सीडेंट, फ्लेवोनोइड्स, एंथोसायनिन, सैयोनिन और लिग्नन्स का एक पावरहाउस भी है, जो

आपके स्वास्थ्य के लिए बहुत फायदेमंद है, इसलिए इन्हें सुपरफूड कहा जाता है।

सेहत के लिए हैं फायदेमंद

1. ब्लड ग्लूकोज लेवल को मेनटेन करते हैं : मिलेट्स, गेहूं और मक्का की तुलना में, पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं और ग्लुटन फ्री भी होते हैं। इनका ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है। इनमें उच्च मात्रा में डाइटरी फाइबर सभी आवश्यक अमीनो एसिड, विटामिन और मिनरल्स के साथ प्रोटीन भी होता है और इसके कारण ये ब्लड ग्लुकोज लेवल को मेंटेन करते हैं।

2. वज़न घटाने में मदद : मिलेट्स खाने से वज़न नियंत्रित रहता है। इसे कम करने में सहायता मिलती है। जैसे बाजरे का आटा नियमित आहार में शामिल करना या नाश्ते के लिए मिलेट्स को शामिल करने से मोटे लोग अपनी बी.एम.आई. (BMI) को कम कर सकते हैं।

3. दिल के लिए अच्छे हैं मिलेट्स : 'मिलेट्स' एंटीऑक्सीडेंट का अच्छा स्त्रोत है, जिसमें बीटा-ग्लूकोस, फ्लेवोनोइड्स, एंथासायनिडिन, टैनिन, लिग्नन्स और पोलिकोसैनोल शामिल हैं। ये एंटीऑक्सीडेंट एल.डी.एल. कोलेस्ट्रॉल को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और आर्टरीज़ को स्वस्थ बनाए रखने में मदद करते हैं।

4. कैंसर सेल्स से करते हैं फाइट : फॉक्सटेल और प्रोसो वैरायटी के मिलेट्स कैंसर सेल्स के विकास को रोकने में प्रभावी साबित हुए हैं। मिलेट्स में फाइटोकेमिकल्स सामान्य कोशिकाओं को कोई नुकसान पहुंचाए बिना कोलन, ब्रेस्ट और लिवर में कैंसर सेल्स के निर्माण को कम करते हैं।

5. अच्छा होता है डाइजेशन (पाचन) : मिलेट्स में अच्छी मात्रा में डाइटरी फाइबर होने से डाइजेस्टिव

सिस्टम अच्छा रहता है। इससे कब्ज़, पेट फूलना, सूजन, ऐंठन जैसी परेशानियां कम से कम होती हैं। लिवर ओर किडनी जैसे अन्य महत्वपूर्ण अंगों के स्वास्थ्य में सुधार होता है और इम्यूनिटी सिस्टम मज़बूत होता है।

बागों में अदरक की खेती कैसे करें

उपयोगिता : बाग में अन्तराशय के रुप में अदरक की खेती करना अत्यन्त लाभप्रद है। पौधे की छाया में अच्छी उपज ली जा सकती है। मसालों में अदरक का विशेष स्थान है। अदरक से पेय, चटनी, आचार, सिरका और अन्य खाद्य पदार्थ तैयार किए जाते है। सर्दी, खांसी

और जुकाम में विशेष उपयोगी है। इसको मसाला तथा औषधि के रुप में प्रयोग किया जाता है। संसार की लगभग आधी अदरक भारत में उत्पादित होती है। विदेशों को करोड़ो रुपये की अदरक निर्यात की जाती है।

जलवायु : अदरक की वृद्धि के लिए गर्म व तर जलवायु सर्वोत्तम है। इसकी फसल समुद्रतल से लेकर 1500 मीटर की ऊंचाई तक जहां पर 80 इंच से लेकर 100 इंच तक वार्षिक वर्षा होती है, वहां सफलता पूर्वक की जा सकती है। फसल की बुवाई तथा जमाव के समय कम वर्षा तथा फसल पकने के एक माह पूर्व शुष्क वातावरण अधिक उपयुक्त है।

भूमि एवं तैयारी : अच्छे जल निकास वाली दोमट तथा बलुई दोमट भूमि उपयुक्त है। अप्रैल-मई में दो जुताई हैरो से तथा 6-7 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करें। खेत को सिंचाई की सुविधानुसार छोटी-छोटी क्यारियों में विभाजित करके फावड़ा से गुड़ाई करें।

खाद व उर्वरक : अच्छी पैदावार हेतु अन्तिम जुताई से पूर्व 25 से 30 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हैक्टेयर खेत में फैलाकर मिट्टी में भली-भांति मिलायें। रासायनिक खाद के रुप में 100 किलो नाइट्रोजन, 80 किलो फास्फोरस एवं 80 किलो पोटाश प्रति हैक्टेयर आवश्यक है। नाइट्रोजन की एक-तिहाई मात्रा फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के पूर्व अन्तिम जुताई के साथ तथा नाइट्रोजन की शेष मात्रा दो किस्तों में खड़ी फसल में मिट्टी चढ़ाते समय बुवाई के 40 दिन बाद प्रयोग करें।

जातियां : अदरक की जातियों को मुख्य रुप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) बाहर से आई हुई जातियां (अभ्यागत जातियां)

1. रियोडिजनरियो : ब्राजील से आयात की गई है। इसकी उपज 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। इसमें रेशे का प्रतिशत 5.19 है तथा सीठ का प्रतिशत 16.19 है।

2. चायन : चीन से प्राप्त की गई जाति है। इसका उत्पादन 180 से 200 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। इसकी गांठ नर्म होने के कारण पेय बनाने के लिए विशेष उपयुक्त है। इसमें रेशा 3.34 प्रतिशत तथा सौठ का प्रतिशत 15 है।

(ब) देशी जातियां : नदिया, मान्थोड़ी, बाइनाड, बरुया सागर नस्सापट्टम, मेरान, थोनशेलडियम, चकराता तथा पहाड़ी। उपज प्रति हैक्टेयर 130-170 क्विंटल है।

बुवाई का समय : अप्रैल से जुलाई

बीज की मात्रा : बीज आकार के अनुसार 10 से 13 क्विंटल प्रति हैक्टेयर आवश्यकता होती है। अदरक की गांठों को तीन या चार सैंटीमीटर के टुकड़ों में विभाजित करके बुवाई करते हैं। प्रत्येक टुकड़ा कम से कम 2 आंखों से युक्त हो तथा उनका भार लगभग 10 ग्राम हो। बीज को बोने से पहले 0.5 प्रतिशत एगलाल / कैप्टान से उपचारित करने के लिए 5 मिनट घोल में डुबा देना चाहिए।

बीज की बुवाई : बुवाई कतारों में करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 25 से 30 सैंटीमीटर पौधे से पौधे की दूरी 15-20 सैंटीमीटर तथा बीज की गहराई 4 सैंटीमीटर रखते हैं। गर्मी, नमी तथा अधिक वर्षा से बचाव के लिये बुवाई के तुरन्त बाद खेत को पत्ती, घास अथवा गोबर की सड़ी खाद से ढक देना चाहिये।

निराई, गुड़ाई तथा मिट्टी चढ़ाना :

आवश्यकतानुसार 3-4 बार निराई, गुड़ाई तथा 2 बार पौधों पर मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है लेकिन गांठो को हानि नहीं पहुंचनी चाहिए।

सिंचाई : जलवायु एवं भूमि की आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। वर्षा ऋतु में वर्षा ना होने पर सिंचाई करें तथा बाद में नियमित सिंचाई करें। हल्की नमी आवश्यक है। नमी सुरक्षित रखने के लिए बुवाई के बाद पत्तों से ढक देना चाहिए। खुदाई के एक माह पूर्व से सिंचाई बंद कर दें।

खुदाई एवं उपज : अदरक की फसल लगभग 8 से 9 माह से खुदाई योग्य हो जाती है। पकते समय पत्तियां सूखने लगती है। खुदाई के एक माह पहले से सिंचाई ना करें। देशी जातियों से 130-170 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तथा उन्नतशील विदेशी जातियों से 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

रोग एवं कीट :

1. पर्णदाग : पत्तों पर पीले रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में भूरे रंग में बदल जाते है, साथ ही पत्ती सूखने लगती है।

रोकथाम : ब्लाइटोक्स या फाईटोलान का 0.3 प्रतिशत का छिड़काव अगस्त-सितम्बर माह में 15 दिन के अन्तराल से दो बार अवश्य करें।

2. थ्रिप्स कीट : ये कीट पत्तियों का रस चूस कर हानि पहुंचाता है। बाद में पत्ते सूखने लगते हैं।

रोकथाम : रोगोर / मोनो-क्रोटोफॉस 0.1 प्रतिशत घोल कर छिड़काव करें।

बढ़ते तापमान में करें – बैंगन की माइट (बरूथी) का नियंत्रण

बैंगन की सब्ज़ी पूरे देश भर में प्रचलित है। इसकी नरम और कोमल प्रकृति के कारण इसमें बहुत सारे कीटों, बीमारियों व लाल रंग की माइट का आक्रमण बहुत अधिक होता है। बैंगन में लाल रंग की माइट जिसका वैज्ञानिक नाम टेट्रनिकस सिन्नबेरिनस (Tetranychus Cinnabarinus) है। बैंगन को नुकसान पहुंचाने वाली लाल रंग की माइट कीटों की तरह ही होती है, जिनमें आठ पैर (चार जोड़ी) होती है। इनका शरीर दो भागों में सिर एवं उदर में विभक्त होता है। इनका रंग भूरा लाल या संतरी लाल होता है। माइट के ऊपर वाले भाग पर प्राय: दो गाढ़े रंग के धब्बे होते है। इस माइट का प्रभाव प्राय: गर्मियों में अधिक होता है, तब इनकी संख्या तेज़ी से बढ़ती है। मादा करीब 100 अण्डे देती है, जो प्राय: सफेद रंग के होते है और बाद में पीले हो जाते है। लारवा जिसके छ: पैर होते हैं, बाद में निम्फ में परिवर्तित हो जाते हैं और जिनके आठ पैर होते हैं व पीलापन लिए होते है। निम्फ बाद में वयस्क बन जाता है। माइट का जीवन चक्र करीब आठ दिन में पूर्ण हो जाता है।

गर्म तथा शुष्क में जीवन-चक्र जल्दी होता है। इस प्रकार एक ही फसल पर कई पीढ़ियां पूरी हो जाती हैं। ठंडे मौसम में मादा सुषुप्त अवस्था में चली जाती है और मौसम गर्म हो जाने पर फिर सक्रिय हो जाते हैं।

नुकसान : लाल माइट से बैंगन की फसल को प्रति वर्ष लगभग 25-30 प्रतिशत तक नुकसान होता है। लाल माइट के मुखांग सुई जैसे होते है, जिसे यह पत्तियों या टहनियों की कोशिकाओं में चुभा कर उनका रस चूस लेती हैं। इसके निम्फ तथा व्यस्क दोनों ही अवस्थाएं रस चूसती हैं, इससे क्लोरोफिल नष्ट हो जाता है। परिणामस्वरूप पत्तियों पर पहले हल्के सफेद रंग के सूई के नोक के समान धब्बे दिखाई देते है, बाद में पीले रंग के धब्बे हो जाते है, जो खेत में दूर से ही दिखाई देते है। धीरे-धीरे पत्तियां पीली या भूरी हो जाती है और सूख कर गिर जाती है। अधिक आक्रमण होने पर माइट पौधों एवं तने पर मकड़ी के समान जाले बना लेती है एवं उस जाल में अंडे एवं माइट की सभी अवस्थाएं पाई जाती है।

माइट पत्तियों के अतिरिक्त कोमल शाखा से भी रस चूसती है तथा पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया को प्रभावित करती हैं, जिससे पौधा कमज़ोर हो जाता है तथा पैदावार में (40 प्रतिशत दक्षिण भारत) भारी कमी आ जाती है। प्रभावित पौधों में फल छोटे लगते हैं और गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है।

नियंत्रण : * अधिक प्रकोप वाली टहनियों व पत्तियों को तोड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

* फसल पर सादे पानी का छिड़काव करने से भी काफी संख्या में माइट मर जाती हैं।

* फसल कटाई के बाद खरपतवार व फसल अवशेषों को एकत्रित करके जला देना चाहिए।

* सफल नियंत्रण हेतु प्रोपराफाईट (ओमाइट) 57 ई.सी. 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बना कर फसल पर छिड़कें तथा 10-15 दिन बाद फिर इस दवा का छिड़काव दोबारा करें या डाइकोफॉल 18.5 ई.सी. का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें तथा 6-7 दिन बाद इस छिड़काव को दोबारा करें।

पर्वतीय इलाकों में भूधंसाव

बदलता भूजल प्रवाह बढ़ाता भवनों के लिए जोखिम

जोशीमठ भूधंसाव से उपजी चिंताओं तथा पहाड़ी शहरों को बचाने-बसाने के सिलसिले में भूजल विज्ञान की समझ जरूरी है। इन क्षेत्रों में भूजल की तेजी से व अप्रत्याशित घटत-बढ़त भवनों को लंबी अवधि में कमजोर ही करती है। यदि यह बाहर निकलता कम पानी पहले कहीं नींवों के आसपास जमा होने की वजह से है, तो भवनों की सुरक्षा के लिए जोखिम माना जाएगा।

पर्वतीय भूमिगत जल भंडारों पर वैश्विक स्तर पर भी बहुत विस्तृत अध्ययन कई कारणों से नहीं हो पाया है। उत्तराखंड जैसे घोषित पर्वतीय राज्य में भी यही स्थिति है। किंतु जोशीमठ भूधंसाव से बनी राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय चिंताओं तथा पहाड़ी नए-पुराने शहरों को बचाने-बसाने के क्रम में भूजल विज्ञान की जमीनी समझ अपरिहार्य हो गई है।

जोशीमठ में 2 जनवरी, 2023 से एक कॉलोनी के चौनल से पानी निकलने की सूचना मिलने के बाद से ही सरकारी स्तर पर इसकी प्रतिदिन माप की जा रही है और तब से जलप्रवाह में लगातार उतार-चढ़ाव देखा जा रहा है। बयान जारी होते रहे है कि पानी के प्रवाह की दर इतनी कम हुई या इतनी ज्यादा हुई, या अब एकदम ही बंद हो गई है। पानी लोगों के घरों में भी दरारों के साथ आया था। ऐसे बयानों से आमजन के बीच यह धारणा विकसित करने की कोशिश होती है कि कम होता डिस्चार्ज भूधंसाव का जोखिम कम होने का सूचक है। ऐसा विश्लेषण करना वैज्ञानिक दृष्टि से सही नहीं होगा। यदि निर्माणों को आधार देने वाली परतों में जल रिसाव या जल निकासी घटती-बढ़ती रहती है अथवा चट्टानों के अपभ्रंशों में पानी सूखता-भरता रहता है, यानी उतार-चढ़ाव होता है, तो आधारित भवनों की नींवों पर काफी दबाव आ जाता है।

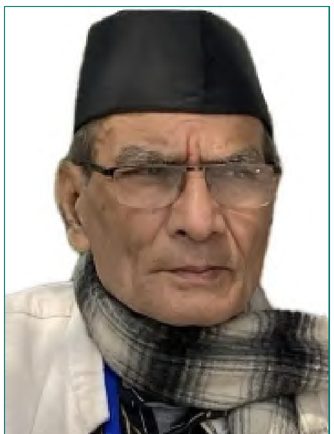

विरेन्द्र कुमार पैनुली

भूजल की तेजी से अप्रत्याशित घटत-बढ़त भवनों को लंबी अवधि में कमजोर ही करती है। यदि यह बाहर निकलता कम पानी पहले कहीं नींवों के आसपास जमा होने के कारण कम हो रहा है, तो वह भवनों की सुरक्षा के लिए ठीक नहीं है। नींव के आसपास जमा पानी मृदा परतों की ताकत कम कर देता है। पहाड़ों में, खासकर चूने के अपभ्रंशों में भी पानी घुसता व जमा होता है। ठोस चट्टानों की दरारों से भी पानी घुसता है। घने जंगलों के चौड़ी पत्तियों वाले क्षेत्र में भी भूमिगत जल जमा होता है। रिसाव बर्फबारी से भी संभव है।

अनुभव रहा है कि जब कभी अचानक नदी की धारा मंद हो जाती है, तो अंदेशा पैदा हो जाता है कि कहीं ऊपर नदी मार्ग में भूस्खलनों से अवरोध आ गया है। अब पानी कम दिख रहा है, किंतु जब वह अवरोध टूटेगा, तो नदी भीषण वेग में आ सकती है। जलवायु बदलाव की अतिरेकी घटनाओं के बीच ऐसे दंश बढ़ेंगे ही।

कई बार गहराइयों तक पहुंची नींवों से भी पहाड़ों में जमीन के अंदर ढलानों में बहता जल-प्रवाह बाधित हो जाता है। ऐसे में जलधाराएं अन्य राहें ढूंढ़ लेती हैं व अन्य कमजोर भ्रंशों से फूटकर बाहर निकल सकती हैं। जमीन के भीतर यदि ढीली मिट्टी-पत्थर की परतें हों, तो जैसे सतह पर ढलानों में वेगमयी जल-प्रवाह मलबा-मिट्टी लेकर बढ़ता है, वैसे ही वे जमीन के भीतर भी मिट्टी-पत्थर लेकर बढ़ सकते हैं और मकानों, भवनों व पिलरों की नींव की मिट्टी बहाकर आगे ले जा सकते हैं। नींव के मेटिरियल के कटाव से मकान, भवन, पुल आदि तिरछे या ध्वस्त हो सकते हैं। यदि भवनों के आसपास किन्हीं कारणों से दरारें आ जाएं, तो भूमिगत नींवों के पास पहुंचा पानी भी मकानों, भवनों या अन्य कंक्रीट ढांचों को असुरक्षित व जर्जर बना सकता है।

निर्माण संरचनाओं की नींवों के जितना निकट भूमिगत जल स्तर होता जाता है, उतनी ही नींव की भवन धारण क्षमता घटती जाती है। भूमिगत जल जितना नीचे होगा, उतना ही कम उसका असर निर्माण संरचनाओं पर पड़ेगा। शैल या मृदा परतों के रंध्रों में पहुंचा पानी पोर प्रेशर पर असर डालता है। यदि रंध्रों में पानी हवा को हटाकर अपनी जगह बना रहा है, तो पानी, वायु से भारी होने के कारण, शैल या मिट्टी की परतों का भार बढ़ा देता है। इससे सतह व भीतर के ढलावों (स्लोप्स) में अस्थिरता आ जाती है, जिससे निर्माणों में भी अस्थिरता आ सकती है। साथ ही, पानी जब किसी शैल या मृदा परत पर रिसता रहता है, तो वह उस परत के भौतिक व रासायनिक घटकों में बदलाव ले आता है।

यदि शौचालय सीवर लाइनों से जुड़े नहीं है और उनका मल-मूत्र एवं शौच-जल परिसर में बने पिटों में ही जाता है, तो अत्यधिक उपयोग की स्थिति में भूमि के भीतर नींवों के आसपास रिसाव और जल-जमाव की समस्या पैदा हो सकती है। अधिकांश गांवों व बस्तियों में शौचालय सीवर नेटवर्क से जुड़े नहीं है, इसलिए यह जोखिम वहां भी विद्यमान है। ऐसे में यदि किसी स्थान पर सामान्य क्षमता से अधिक भीड़ शौचालयों और मूत्रालयों का उपयोग करे, तो पिटों पर अत्यधिक दबाव पड़ना, उनका क्षतिग्रस्त होना तथा रिसाव की समस्या बढ़ना स्वाभाविक है।

पहाड़ी क्षेत्रों में बहुमंजिला भवनों के निर्माण के लिए गहरी नींव आवश्यक होती है, जिससे भूमिगत जलवाहिनियों को क्षति पहुंचने या उनके प्रोंतिक प्रवाह में परिवर्तन की आशंका बढ़ जाती है। जोशीमठ जैसे क्षेत्रों में वर्षो से जारी असमान भू-धंसाव के कारण सतही और भूमिगत जल के प्रवाह तथा रिसाव की दिशा भी बदल सकती है। जिन इलाकों में भू-धंसाव हो रहा है, वहां खासकर बरसात में अधूरी नालियां या अन्य प्रकार के खदान के काम नहीं छोड़ जाने चाहिए। यदि नदियों में, बैराज-बांधों में, सुरंगों के मुहानों पर मलबे के अंबारों के अवरोध खड़े कर दिए हों, तो उनसे भी पानी रिसकर पार्श्व की संरचनाओं में जा सकता है।

जोशीमठ धंसाव से जुड़ी सरकारी उपग्रह तस्वीरें भले ही सार्वजनिक वेबसाइट से हटा दी गई हों, लेकिन ग्रीस के एक शोध संस्थान के सैटेलाइट विश्लेषण, जिसे भारत के एक प्रतिष्ठित प्रकाशन ने प्रकाशित किया, के अनुसार 2018 से 31 दिसंबर, 2022 तक जोशीमठ औसतन लगभग 10 सैंटीमीटर प्रतिवर्ष की दर से धंसता रहा।

लेखक पर्यावरण वैज्ञानिक हैं।

बारिश का पानी अगर गमलों में भर जाए!

बारिश में पौधे खराब होने की आशंका तब होती है, जब गमलों में पानी भर जाता है।

बरसात का पानी पौधों के लिए बहुत अच्छा होता है। इससे पौधों की बढ़वार अच्छी होती है, परन्तु जब यही पानी गमले में भर जाता है, तो पौधों को नुकसान भी पहुंचता है। पौधों के आस-पास पानी भरने से इनकी जड़ें गलने लगती हैं।

छोटे-छोटे गमलों को थोड़ा-सा तिरछा करके अतिरिक्त पानी निकाला जा सकता है। लेकिन बड़े गमलों को उठाना संभव नहीं है। लिहाजा हर छोटे-बड़े गमलों के लिए कुछ सुझाव अजमाए जा सकते हैं।

ऊंचाई पर रखें

बड़े और भारी गमलों को हल्का-सा तिरछा करें और उसके नीचे एक पत्थर रख दें। गमला तिरछा होने की वजह से अतिरिक्त पानी निकलता रहेगा। इसके अलावा गमलों को दो समतल पत्थर या किसी ठोस वस्तु पर रख दें। ऊंचाई पर होने से गमलों के छेद बंद नहीं होंगे और पानी की निकासी खुली रहेगी। छोटे गमलों के नीचे भी पत्थर रख सकते हैं। अगर गमलों के नीचे प्लेट रखी है, तो उसे जरुर हटा दें।

निकासी बढ़ाएं

गमलों में पानी निकासी के लिए जहां छेद होता है, उस जगह एक बड़े पेचकस या सरिया से आधे गमले तक छेद कर दीजिए। छेद बड़ा होने से पानी आसानी से निकल जाएगा।

छाया का इंतजाम

गमलों को बरसात में खुला रखने के बजाय छाया में रखने की कोशिश करें। गमलों के ऊपर पन्नी का शेड बना सकते हैं, जिसे कभी भी खोला जा सके। जब हल्की बारिश हो तो इसे खोल दें, ताकि पौधों को आवश्यकता अनुसार बरसात का पानी मिले और ये सुरक्षित भी रहें।

मिट्टी में भूसी मिलाएं

गमले की मिट्टी में नारियल की जटाएं या लकड़ी का बुरादा मिला सकते हैं। ये अतिरिक्त पानी को अवशोषित कर लेगा और गमले में पानी नहीं भरेगा। अगर नया पौधा लगा रहे है, तो गमला भरते समय धान की भूसी (पैडी हस्क) का इस्तेमाल करें। सबसे पहले इसे गमले में 4-5 इंच तक भर दें। थोड़ी-सी मिट्टी भरने के बाद पौधा लगाएं और फिर मिट्टी डालें। इससे जलभराव की स्थिति नहीं आएगी और पौधा भी अच्छा बढ़ेगा।

देखभाल करते रहें

बरसात में गमलों की मिट्टी की गहरी गुड़ाई अवश्य करें। कम से कम दो बार किसी भी फंगीसाइड का स्प्रे पौधों पर अवश्य करें। इसके अलावा अनावश्यक खरपतवार उग आते है, तो उन्हें जड़ सहित निकाल दें।

री-पॉटिंग करें

बरसात में पौधों की री-पॉटिंग अवश्य करें। गमले में टूटे हुए गमले के टुकड़े डालें। फिर मिट्टी डाल कर पौधा लगाएं, ताकि छेद खुला रहे। पुरानी मिट्टी है, तो उसमें से सूखी जड़ें और पत्तियां अवश्य हटा दें, क्योंकि इनके कारण ही पानी की निकासी सबसे अधिक बाधित होती है।

पौधों का सुरक्षा कवच

* एकसाथ बहुत सारे गमलों को प्रोटेक्टर से ढका जा सकता है। हरे या सफेद रंग की शीट को गमलों के ऊपर शेड की तरह लगा सकते हैं।

* हर गमले में नेट शीट भी बांध सकते हैं। इससे हवा पौधों को मिलेगी और बारिश का सीधा पानी भी नहीं लगेगा।

* अगर आप गारबेज बैग इस्तेमाल करते है, तो हर गमले को इससे ढंक सकते हैं।

* अगर अतिरिक्त डिब्बे हैं, जो गमले के बराबर या उससे बड़े हैं, तो छोटे-छोटे पौधों पर इन्हें उल्टा रख कर ढंक सकते हैं।

* अगर गाड़ी का कवर है, तो उसे भी पौधों के ऊपर डाल कर पानी से बचाया जा सकता है।

आर.एस. यादव, बागवानी विशेषज्ञ

कृषि वैज्ञानिकों और सलाहकारों का कहना है कि किसानों को जैविक विधि से खेती करनी चाहिए। उपरोक्त विधि में अगर नीम के पत्ते, नीम की खल्ली और नीम के तेल का प्रयोग करेंगे, तो किसान अपनी फसल को कीटों के प्रकोप से बचा सकते हैं। इस तरह फसल से काफी शुद्ध अन्न की उपज प्राप्त होगी, साथ ही यह स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभदायक होगी।

नीम की पत्ती एवं निम्बोली से किसान कैसे बनाएं कीटनाशक

इसके प्रयोग से किसान अपना खर्च कम कर सकता है

भारत एक कृषि प्रधान देश है। लगातार बढ़ती आबादी का सीधा प्रभाव खाद्यान्न पर है। पिछले वर्षों में आनाज का उत्पादन तो बढ़ा है, परन्तु इसे सावधानी से संरक्षित ना किया जाए तो इसमें घुन, कीड़े, सुंडी व फफूंद लगने का खतरा बढ़ जाता है।

आनाज को सुरक्षित रखने के लिए आज जो कीटनाशी या रसायन प्रयोग में लाए जाते हैं, वे ज़हरीले होते हैं, जिसके कारण लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है, जबकि पुराने समय से ही हमारे पास एक ऐसा कीटनाशक है, जिसके इस्तेमाल से ना तो कोई समस्या होती है और ना ही आनाज खराब होता है और वो कीटनाशक है नीम। पहले ज्यादातर लोग आनाज को सुरक्षित रखने के लिए इसी का इस्तेमाल करते थे। आपको मालूम होगा कि कैसे आप नीम का इस्तेमाल करके आप अपने आनाज को सुरक्षित रख सकते हैं।

किसान नीम से बनाएं जैविक कीटनाशक : इसके इस्तेमाल से बेहतर उपज किसानों को मिलेगी। फसल को कीट और रोगों से बचा कर रखना किसानों के लिए एक बड़ी चुनौती होती है। इसके लिए किसान भाई कई तरह के रासायनिक तरीके भी अपनाते हैं। इन रसायनों के उपयोग से खेत की ज़मीन, भूमिगत जल, मानव स्वास्थ्य, फसल की गुणवत्ता और पर्यावरण को भी हानि पहुंचती है। नीम किसानों के लिए लाभदायक, सस्ती जैविक तकनीक है, जिससे किसान अपनी फसल को कीट के प्रभाव से बचा सकता है।

नीम का प्रयोग कैसे करें : कृषि वैज्ञानिकों और सलाहकारों का कहना है कि किसानों को जैविक विधि से खेती करनी चाहिए। उपरोक्त विधि में अगर नीम के पत्ते, नीम की खल्ली और नीम के तेल का प्रयोग करेंगे, तो किसान अपनी फसल को कीटों के प्रकोप से बचा सकते हैं। इस तरह फसल से काफी शुद्ध अन्न की उपज प्राप्त होगी, साथ ही यह स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभदायक होगी।

किसान खुद नीम से कीटनाशक तैयार कर सकते है, जिससे किसान को काफी लाभ मिलेगा। आपको मालूम होगा कि किसान एक एकड़ खेत में रासायनिक कीटनाशक का छिड़काव करते हैं, तो उनका कम से कम 2000-300 रुपए खर्च आता है। लेकिन फसल को कीट और रोगों से बचाने के लिए नीम का प्रयोग एक बहुत अच्छा तरीका है। गांवों में नीम आसानी से मिल जाता है। यदि किसान नीम से कीटनाशक तैयार करते है, तो उन पर आर्थिक भार भी नहीं पड़ता है। इसके अतिरिक्त लगातार अंधाधुंध रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से हानिकारक कीटों के लिए प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती जा रही है तथा वे मर भी नहीं रहे है। विपरीत प्रकृति में पाए जाने वाले लाभकारी कीटों पर भी प्रतिकूल असर हो रहा है। इसलिए वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह जानना आवश्यक है। इसके विपरीत प्रकृति में पाए जाने वाले लाभकारी परभक्षी कीटों पर भी प्रतिकूल असर हो रहा है। अत: वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बात की आवश्यकता है कि शुद्ध फलों और सब्जियों का उत्पादन लेने के लिए कीट नियंत्रिकी प्रभावी व कम खर्चीली विधियां अपनाई जाएं। इनमें प्रमुख एवं प्रभावी विधि है - नीम के पत्तों एवं निम्बोली से तैयार घोल से कीट नियंत्रण। यह एक आसान व कम खर्चीली विधि है। साथ ही किसान भाई आसानी से यह कीटनाशक घर पर ही बना सकते है। इसका सिर्फ समय पर छिड़काव करना पड़ता है। कपास, दलहन, सब्ज़ी तथा अन्य फसलों के कीट नियंत्रण में प्रभावी व जैविक तंत्र विधियां अपनाई जाएं। नीम प्रमुख एवं अत्यंत प्रभावी जैविक नियंत्रण विधि है। नीम के पत्तों या निंबोली से तैयार घोल से कीट नियंत्रण एक आसान व कम खर्चीला तरीका है। इसका सिर्फ समय पर छिड़काव करना पड़ता है। नीम एक गुणकारी, लाभकारी तथा बहुत उपयोगी पेड़ है। यह पर्यावरण मित्र के नाम से भी जाना जाता है। नीम के प्रत्येक भाग में कीटनाशक गुण पाए जाते है। अधिक गुणकारी होने की वजह से किसान नीम के पेड़ को अपने घरों और खेतों के आस-पास आसानी से लगाया जा सकता है।

वर्तमान में किसान फसलों का अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए रासायनिक कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग किया जा रहा है तथा इसके लिए किसान को अधिक खर्च करना पड़ता है। रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से कई प्रकार की जैविक समस्याएं उत्पन्न हो रही है तथा वातावरण को भी प्रदूषित करने के लिए इन रसायनों का सबसे बड़ा योगदान है। भूमि में रसायनों के प्रयोग किए जाने पर मानव शरीर में हानिकारक दुष्प्रभाव पड़ते है और शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी कम हो जाती है। कुछ रसायन मानव शरीर से सीधा संपर्क होने पर भारी क्षति पहुंचाते है तथा शरीर के अंगों में एकत्रित हो जाते है। कई प्रकार के रोग जैसे दाद, खाज, खुजली, दमा, एलर्जी, बाल झड़ना और गुर्दे के रोग इत्यादि को जन्म देते हैं। नीम से कीटनाशक बनाना काफी आसान है।

नीम के पत्ते या निंबोली से कीटनाशक तैयार करने की विधि : नीम के पत्ते या निंबोली का घोल तैयार करने की विधि के लिए 10 किलोग्राम नीम के पत्ते या 5 किलोग्राम निंबोली को बारीक पीस कर 2 किलोग्राम गौ मूत्र, उसमें 8-10 लीटर गर्म पानी डाल कर हर दिन 2-3 बार अच्छी तरह लकड़ी से हिला दें। छायादार पेड़ छायादार जगह पर इसे 5-7 दिनों के लिए भिगो कर रख दें। इसके बाद इसे कपड़े की पोटली में बांध कर पानी में डुबो कर रख दें। जब रंग दुधिया हो जाए (निंबोली के उपयोग में) तो इसे कपड़े से अच्छी तरह छान दें। इसके बाद कपड़े से छान कर घोल में 200 मिलीलीटर साबुन या 100 ग्राम सर्फ मिला दें। इसके बाद इसे 100-125 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। एक एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। शेष बचे नीम पदार्थ को बाद में खाद बनाने के लिए प्रयोग में ले सकते हैं। सात दिन बाद रस चूसक कीटों और रोगों का प्रकोप नहीं दिखा। नीम से बने कीटनाशक का खरीफ फसलों पर छिड़काव से सभी रस चूसक कीटों और रोगों की प्रथम द्वितीय अवस्था खत्म हो जाती है तथा इसके छिड़काव से रस चूसक कीटों और रोगों से कपास, सब्ज़ी, दाल व अन्य फसलों को बचाया जा सकता है।

फसल पर समय-समय निश्चित अंतराल को अपनाकर छिड़काव करने से रस चूसक कीटों और रोगों से बचाया जा सकता है। नीम से बनी कीटनाशकों के इस्तेमाल से सब्ज़ियों की ज़हर रहित फसल ली जा सकती है तथा रसायन कीट के दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है।

नीम से बने कीटनाशक से फायदे

1. सस्ता और बनाने में बहुत आसान है।
2. वातावरण को प्रदूषित नहीं करता और सभी हानिकारक कीटों व रोगों के प्रति प्रभावी, ज़हर रहित व सुरक्षित होता है।
3. कपास की फसल में रस चूसक, मिलीबग व रोगों के बचाव हेतु दो या तीन छिड़काव करने से काफी हद तक रासायनिक कीटनाशकों के खर्च को कम किया जा सकता है और अच्छी पैदावार ली जा सकती है। अन्य फसलें जैसे ज्वार, मूंग व अन्य खरीफ की फसलों में भी इस तरह से दो या तीन छिड़काव नीम से बनी जैविक कीटनाशक के किए जा सकते हैं।

4. एक किलोग्राम निंबोली पाऊडर प्रति क्विंटल चना, मटर और अन्य दालों में मिला कर रखने पर 6 महीने से 12 महीने तक सभी संग्रहित आनाज के कीटों से सुरक्षा की जा सकती है।
5. नीम के तेल (500 मिलीलीटर प्रति क्विंटल) को चने में मिला कर रखने पर 6 महीने तक डोरा / बीटल से सुरक्षित रखा जा सकता है।
6. नीम की 2 से 3 किलोग्राम पत्तियों को प्रति आनाज वाली टंकी (10 क्विंटल) गेहूं, ज्वार (आनाजों) में मिलने पर सभी प्रकार के संग्रहित आनाज के कीटों से 6-7 महीनों तक आनाज को सुरक्षित रखा जा सकता है।
7. नीम की पत्ती या नीम खली के पानी के घोल में छिड़काव से पहले टमाटर के पौधों की जड़ों को कुछ देर तक डुबोने से सूत्रकृमियों की संख्या में काफी कमी आती है।
8. आम, अमरूद, टमाटर, बैंगन तथा मिर्च, फल व सब्ज़ियों के खेत में नीम खली (300-600 किलोग्राम प्रति एकड़) भूमि उपचार के रूप में प्रयोग करने से सूत्रकृमि का प्रभावी नियंत्रण होता है। फसल पर कीटों का प्रकोप होने से रोक सकते हैं। इसका प्रयोग कीट नियंत्रण में करेंगे, तो छिड़काव से किसी भी प्रकार का खतरा नहीं है।

आनार की आधुनिक खेती

गतांक से आगे

अंतरासस्यन :- आनार का पौधा जब तक आर्थिक उत्पादन देना आरंभ नहीं कर देता है या 2-3 वर्ष तक के आनार के बाग में अंतर्वर्तीय फसलों के रूप में सब्जियों की खेती करना अधिक लाभकारी होता है। इससे पौधों का विकास भी अच्छा हो जाता है, साथ ही सब्जी उत्पादन से उस समय अधिक लाभ की प्राप्ति की जा सकती है।

फलों की तुड़ाई :- आनार का फल, फूल आने के लगभग 5-6 माह बाद तुड़ाई के लिए तैयार होता है। जब आनार के फल का रंग हल्का भूरा या पीला रंग लिए होता ह। तथा फल को हल्का पीटने पर ध्वनि निकलती है। पूर्ण रूप से सुनिश्चित होने पर फल को सिकेटियर की सहायता से काट लेते हैं। यदि पूर्ण पके फल को तोड़ने में देर करते है तो फलों में फटने की क्रिया प्रारंभ हो जाती है, जिससे उपज में भारी कमीं आती है।

उपज :- आनार का पौधा चार वर्ष का होने पर फल देना प्रारंभ कर देता है। इसका उत्पादन 10 वर्ष की आयु तक बढ़ता रहता है। 8 से 10 वर्ष का पौधा 18 से 20 टन प्रति हैक्टेयर के हिसाब से फल देता है। आनार का पौधा 25-30 वर्ष की आयु तक आर्थिक उत्पादन देता है और उसके बाद धीरे-धीरे उत्पादन में कमी आने लगती है।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन छाल भेदक कीट :- इस प्रकार के कीट पौधों की छाल को खाकर पौधों की डालियों के अंदर सुरंग बना डालते हैं, जिससे पौधे की डाल कमजोर पड़ जाती है। इसमें एक कीड़ा एक छिद्र में रहता है, परंतु इनका प्रकोप अधिक होने पर पौधे से फल का उत्पादन प्राप्त नहीं होता।

नियंत्रण :- इस कीट से प्रभावित बाग को साफ-सुथरा रखना चाहिए। कीट से प्रभावित शाखाओं को काटकर बाग से निकाल देना चाहिए। इससे प्रत्येक छिद्र में रूई में कार्बन-बाईसल्फेट, पेट्रोल या मिट्टी का तेल डालकर प्रत्येक छिद्र में डालते है। तत्पश्चात छेद को लाल मिट्टी से बंद कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त कार्बारिल 2.5 ग्राम प्रति लीटर या मेथोमिल 3.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से पौधों को सुरक्षित बचाया जा सकता है।

तना छेदक :- इस कीट का प्रकोप पुराने या उपेक्षित बागों में अधिक पाया जाता है। इसकी इल्लियां शाखाओं में छिद्र बना लेती है। इसमें मुख्य शाखा प्रभावित होती है। इस प्रकार कीट शाखाओं में छिद्र का जाल बना लेते हैं तथा रात्रि में छिद्र से निकलकर छिलके को खाते हैं।

नियंत्रण :- इससे प्रभावित बागों को साफ-सुथरा रखना चाहिए। साथ पेट्रोल या मिट्टी के तेल में रूई भिगोकर छिद्र में डालते हैं, तत्पश्चात छिद्र को गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

तितली :- इसमें मादा तितली आनार के फूल एवं फलों पर अंडे देती है। इससे इल्ली निकलकर फलों में छिद्र करके प्रवेश कर जाती है। यह फलों में प्रवेश करने के बाद फलों के बीज को खाती रहती है, जिससे फल का विकास रूक जाता है और फल पौधे से गिर जाते हैं।

नियंत्रण :- इसके नियंत्रण के लिए जुलाई में फूल व फल बनते समय 3 मि.ग्रा. प्रति लीटर कार्बारिल 50 डब्ल्यू.पी. या 0.02 प्रतिशत डेल्टामेथ्रीन नामक दवा का 15 दिन के अंतर पर दो छिड़काव करना चाहिए।

मिलीबग :- नवंबर-दिसंबर में इसके शिशु फलों तथा टहनियों पर एकत्र होकर रस को चूस लेते है। इससे पौधे का विकास रूक जाता है। ये कीट एक प्रकार का मीठा द्रव जैसा पदार्थ छोड़ते हैं, जिससे बाद में काली फफूंदी बन जाती है।

नियंत्रण :- इस कीट के नियंत्रण के लिए पौधे पर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या डाईमिथोएट 30 ई.सी. एक मिली/लीटर अथवा मेलाथियान 0. 2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करने से पूर्ण रूप से नियंत्रण हो जाता है। यदि मिट्टी में फोरेट 10 जी नामक दवा को 20 ग्राम प्रति पौधे के जड़ क्षेत्र में मिला दिया जाये तो भी इसका नियंत्रण संभव होता है।

फल छेदक मक्खी :- इस कीड़े का प्रभाव मुख्य रूप से वर्षा ऋतु में अधिक होता है। ये मक्खियां आनार के फल पर अंडा देती हैं तथा लार्वा फल में छिद्र करके अन्दर पहुंचकर गूदे को खाता रहता है, जिससे फलों में सड़न पैदा होती है और फल गिर जाते हैं।

नियंत्रण :- इसके नियंत्रण के लिए फ्लाई ट्रैप जिसमें मिथाईल यूजेनाल होता है, का प्रयोग करने से अच्छा परिणाम मिलता है।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन :- आनार की फसल विभिन्न प्रकार के रोगों से प्रभावित होती है।

फल चित्ती :- यह रोग एक प्रकार के कवक के द्वारा प्रसारित किया जाता है। इस रोग से प्रभावित फल पर छोटे-छोटे धब्बे गोल भूरे-पीले रंग के पड़ जाते है, जिससे फल कम आकर्षक दिखाई पड़ता है। इस रोग का प्रकोप बढ़ने पर धब्बे धीरे-धीरे फल के अंदर की ओर बढ़ने लगते है। अंदर तक फल को हानि पहुंचाते हैं, जिससे कि फल सड़ जाते हैं और फल खाने योग्य नहीं रहता

रोकथाम :- इस रोग से प्रभावित शाखाओं को काटकर नष्ट कर देना चाहिए। फसल में इन्डोथेन एम-45 या कैप्टान 2.5 ग्राम दवा का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर फल आने के बाद छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण चित्ती :- यह रोग कवक के द्वारा पैदा होता है। इस रोग का प्रकोप आनार की पत्तियों पर पड़ता है। इससे प्रभावित आनार की पत्तियों पर ऊपर की ओर काले रंग का धब्बा दिखाई पड़ता है। इस रोग का प्रकोप वर्षा के मौसम में अधिक देखा गया है।

रोकथाम :- इसकी रोकथाम के लिए 0.3 प्रतिशत के लिए 0.3 प्रतिशत के इन्डोथेन एम-45 या इन्डोथेन जेड-78, 0.2 प्रतिशत डाइफज़ेल्टान अथवा 0.1 प्रतिशत कैप्टान नामक दवा का छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर करना चाहिए।

फल सड़न रोग :- यह एक कवक जनित रोग है। इस रोग से प्रभावित फल में नीचे की ओर से या किनारे से छिलके का रंग बदलने लगता है। कुछ दिनों के बाद देखने पर फल भूरे काले रंग का होने लगता है तथा फलों में सड़न होने लगती है एवं एक सप्ताह के अंदर पूरा फल सड़ जाता है।

रोकथाम :- इस रोग से प्रभावित फल एवं शाखा को तुरंत पौधे से अलग कर जला देना चाहिए साथ इन्डोथेन एम-45 या इन्डोथेन जेड 78 के 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। अथवा 5 प्रतिशत बाविस्टिन के घोल का छिड़काव करने से रोग के प्रभाव को समाप्त किया जा सकता है।

अल्टरनेरिया फल चित्ती :- इस रोग से प्रभावित फल पर छोटे-छोटे भूरे रंग के गोलाकार धब्बे दिखाई देते है। इसका प्रकोप होने पर फलों में सड़न होने लगती है तथा फल खाने योग्य नही रहते।

रोकथाम :- इससे प्रभावित फल को पौधे से अलग करके नष्ट कर देना चाहिए तथा इंडोथेन एम-45 के 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करने से फसल को बचाया जा सकता है।

व्याधियां

फलों का फटना :- यह आनार को हानि पहुंचाने वाली व्याधि है। इसमें आनार का फल पौधे में लगा रहता है एवं पकने की अवस्था में पहुंचते ही फल फटने लगता है, जिससे कि आनार का बाजार भाव कम हो जाता है। आनार में फलों का फटना शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है। इसका संबंध मिट्टी की नमीं से भी होता है। अधिक समय तक मिट्टी में नमीं रहने पर, एकाएक अधिक सिंचाई कर देने पर या जीवाणु झुलसा का अधिक प्रकोप होने पर भी इसमें बहुत अधिक फलों का फटना पाया जाता है। पूर्ण पके फल की समय से तुड़ाई न करने पर भी फलों का फटना पाया जाता है। कभी-कभी मिट्टी में बोरॉन तत्व की कमीं होने पर भी फल फटने लगता है।

रोकथाम :- इसकी रोकथाम के लिए सर्व प्रथम मिट्टी में सामान्य नमीं बनाए रखने के लिए गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग करना चाहिए। फलों के फटने की प्रक्रिया को रोकने के लिए आनार में बोरॉन 50 पी.पी.एम. अथवा जिब्रेलिक एसिड 40 पी.पी.एम. का छिड़काव करने पर हमें इस व्याधि से सुरक्षा प्राप्त हो जाती है।

तुड़ाई पश्चात फलों का श्रेणीकरण :- आनार का फल तुड़ाई के पश्चात अपने आकार, रंग, वजन अथवा बाह्य छिलके के आधार पर विभिन्न वर्गो में वर्गीकृत किया जाता है।

सुपर आकार :- इसमें फल का वजन 750 ग्राम से अधिक होता है। फल देखने में सुंदर, बड़ा, गहरे लाल रंग का, दाग धब्बों से रहित एवं आकर्षक होता है।

राजा आकार :- फल आकर्षक, बड़ा, 500 से 750 ग्राम वजन का गहरा लाल रंग, दाग धब्बों से रहित होता है।

रानी आकार :- फल बड़ा, आकर्षक, 400 से 500 ग्राम वजन का लाल रंग एवं दाग धब्बों से रहित होता है।

राजकुमार आकार :- फल सुंदर, आकर्षक, 300 से 400 ग्राम वजन का गहरे लाल रंग का दाग धब्बों से रहि होता है।

12-ए :- इसमें फलों पर 1 से 2 धब्बे होते है। फल लाल रंग का 250 से 300 ग्राम वजन का होता है।

शेष पृष्ठ 3 की

धान की पत्ती लपेट (लीफ फोल्डर) कीट...

नीचे गिर जाती है। परिणामस्वरूप उनका बचाव कम हो जाता है तथा वे मकड़ियों, चींटियों, परभक्षी कीटों और पक्षियों जैसे प्राकृतिक शत्रुओं का आसानी से शिकार बन जाती हैं।

* कैथल, करनाल, कुरुक्षेत्र, पानीपत तथा यमुनानगर जैसे धान उत्पादक जिलों के अनेक अनुभवी किसान इस पारंपरिक विधि से परिचित हैं, यद्यपि वर्तमान में इसका उपयोग सीमित हो गया है।

* वर्तमान समय में अधिकांश किसान समेकित कीट प्रबंधन (IPM) के अंतर्गत नियमित फसल

निरीक्षण, प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण तथा आवश्यकता पड़ने पर अनुशंसित कीटनाशकों का प्रयोग करते हैं। कम प्रकोप की स्थिति में कुछ किसान अभी भी इस यांत्रिक विधि का सहायक उपाय के रूप में उपयोग करते हैं। हल्के से मध्यम प्रकोप की अवस्था में यह विधि कीट की संख्या कम करके रासायनिक कीटनाशकों के छिड़काव की आवश्यकता को कम कर सकती है।

लाभ

* कम लागत एवं सरल तकनीक।
* किसी भी प्रकार के रासायनिक अवशेष (Residues) नहीं छोड़ती।
* पर्यावरण, मानव स्वास्थ्य तथा लाभकारी कीटों एवं प्राकृतिक शत्रुओं के लिए सुरक्षित।
* जैविक एवं प्राकृतिक खेती के लिए उपयुक्त।
* छोटे एवं सीमांत किसानों द्वारा आसानी से अपनाई जा सकने वाली तकनीक।
* रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता कम करने में सहायक।

सीमाएं

* केवल प्रारंभिक या हल्के प्रकोप की स्थिति में अधिक प्रभावी होती है।
* बड़े क्षेत्रों में इसे अपनाने के लिए अधिक श्रम की आवश्यकता होती है।
* वर्षा अथवा तेज हवा की स्थिति में इसकी प्रभावशीलता कम हो सकती है।
* अधिक प्रकोप होने पर अकेले यह विधि पर्याप्त नहीं होती, इसलिए इसे समेकित कीट प्रबंधन (IPM) के अन्य उपायों के साथ अपनाना चाहिए।

ग्वार की खेती का महत्व एवं उत्पादन की उन्नत तकनीक

डॉ. गुरविन्द्र सिंह एवं डॉ. राम गोपाल सामोता,
केन्द्रीय एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन केन्द्र, श्रीगंगानगर

परिचय : ग्वार शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली दलहनी फसल है, जोकि एक अत्यन्त सूखा एवं लवण सहनशील है। अत: इसकी खेती असिंचित व बहुत कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। ग्वार शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के *गऊ आहार* से हुई है, जिसका तात्पर्य 'गाय का भोजन' है। विश्व के कुल ग्वार उत्पादन का 80 प्रतिशत भाग अकेले भारत में पैदा होता है, जोकि 65 देशों में निर्यात किया जाता है। ग्वार की खेती प्रमुख रूप से भारत के उत्तर-पश्चिमी राज्यों (राजस्थान, हरियाणा, गुजरात, उत्तर प्रदेश एवं पंजाब) में की जाती है। हमारे देश के कुल ग्वार उत्पादक क्षेत्र का लगभग 87 प्रतिशत क्षेत्र राजस्थान के अन्तर्गत आता है। राजस्थान में ग्वार की खेती मुख्यत: चुरू, नागौर, बाडमेर, सीकर, जोधपुर, गंगानगर, सिरोही, दौसा, बीकानेर, हनुमानगढ़ एवं झुंझुनू में की जाती है।

महत्व : * ग्वार एक बहुउद्देशीय फसल है, जिसका प्राचीनकाल से ही मनुष्य एवं पशु आहार के लिए महत्व रहा है।

* इसमें प्रोटीन, घुलनशील फाइबर, विटामिन्स (के, सी, ए), कार्बोहाइड्रेट के साथ-साथ प्रचुर मात्रा में खनिज, फास्फोरस, कैल्शियम, आयरन एवं पोटाशियम आदि भी पाया जाता है।

* इसकी ताज़ा व नरम हरी पत्तियों को सब्ज़ी के रूप में खाया जाता है, जोकि पौष्टिक होती हैं।

* ग्वार फली विभिन्न रोगों जैसे खून की कमी, मधुमेह, रक्तचाप, आंत की समस्याओं में लाभकारी है एवं हड्डियों को मज़बूत करने, दिल को स्वस्थ रखने, रक्त परिसंचरण को बेहतर करने के साथ-साथ मस्तिष्क के लिए भी गुणकारी है।

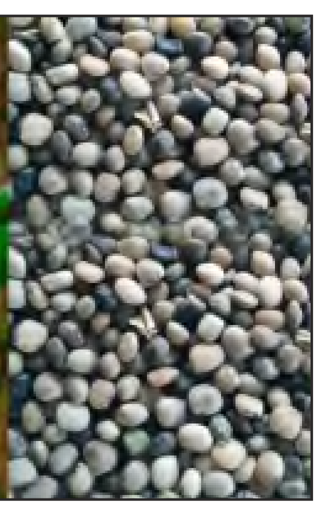

* इसका उपयोग पशुओं के चारे के रूप में होता है तथा दुधारू पशुओं में दूध उत्पादन में बढ़ोत्तरी करता है।

* इसका प्रयोग खेतों में हरी खाद के रूप में भी किया जाता है, जिसके लिए फसल में फूल आने के बाद एवं फली पकने से पहले मिट्टी पलटने वाले हल से भूमि में दबा दिया जाता है।

* यह वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का भूमि में स्थिरीकरण करती है, जिससे ज़मीन की उर्वरा शक्ति बढ़ती है।

* इसके दानों में ग्लेक्टोमेनन नामक गोंद होता है, जो सम्पूर्ण विश्व में 'ग्वार गम' के नाम से प्रचलित है, जिसका इस्तेमाल खाद्य पदार्थों जैसे आइसक्रीम, पनीर, सूप में किया जाता है।

* ग्वार गम का प्रयोग कई प्रकार के उद्योग-धंधों व औषधि निर्माण में किया जाता है। पेट साफ करने, रोचक औषधि तैयार करने, कैप्सूल व गोलियां बनाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा खनिज, कागज़ व कपड़ा उद्योग में भी ग्वार गम महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

* कागज़ निर्माण के समय ग्वार गम को लुगदी में मिलाया जाता है, जिससे कागज़ ठीक से फैल सके और अच्छी गुणवत्ता का कागज़ तैयार किया जा सके।

* कपड़ा उद्योग में यह मांडी लगाने के उपयोग में लाया जाता है।

* श्रृंगार वस्तुओं जैसे लिपिस्टिक, क्रीम, शेम्पू और हैड लोशन में भी ग्वार गम का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा दन्त मंजन, शेविंग क्रीम जैसी वस्तुओं के निर्माण में भी ग्वार गम का प्रयोग होता है।

* ग्वार गम का प्रयोग विस्फोटकों को जलामेथ करने में तथा तेल ड्रिलिंग उद्योगों में डाट लगाने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

* ग्वार गम का उपयोग विभिन्न पेट्रोलियम पदार्थों को तैयार करने में भी किया जाता है।

उत्पादन तकनीक : ग्वार की खेती के लिए उचित जल निकास वाली बलुई दोमट एवं दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। यह फसल सिंचित, असिंचित एवं बहुत कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। हल्की क्षारीय व लवणीय भूमि जिसका पी.एच. मान 7.5 से 8.5 तक हो, वहां पर ग्वार की खेती आसानी से की जा सकती है।

खेत की तैयारी : ग्वार के अच्छे उत्पादन के लिए रबी फसल की कटाई के बाद खाली पड़े खेतों में बुवाई से पहले 15-20 टन प्रति हैक्टेयर सड़ी हुई गोबर की खाद मिलानी चाहिए। दलहनी फसल होने के कारण सामान्यत: ग्वार की फसल में उर्वरकों की कम आवश्यकता पड़ती है। ग्वार का बेहतर उत्पादन लेने के लिए 20-25 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40-50 किलोग्राम फास्फोरस, 20 किलोग्राम सल्फर की सिफारिश वैज्ञानिकों द्वारा की गई है। सभी उर्वरक बुवाई के समय या अंतिम जुताई के समय देने चाहिए। फास्फोरस के प्रयोग से ना केवल चारे की उपज में वृद्धि होती है, बल्कि उसकी पौष्टिकता भी बढ़ती है।

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और दो जुताईयां ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर से करें। अंतिम जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएं, जिससे मृदा नमी संरक्षित रहे। इस प्रकार तैयार खेत में खरपतवार कम पनपते हैं। साथ ही वर्षा जल का अधिक संचय होता है।

बुवाई का समय एवं बीज की मात्रा : ग्वार की बुवाई दो समय पर की जा सकती है :

1. सब्ज़ी के लिए ग्वार को फरवरी-मार्च में सरसों, गन्ना आदि के खाली पड़े खेतों में बोया जाता है।

2. जून-जुलाई में ग्वार मुख्य रूप से चारे और दाने के लिए पैदा की जाती है। इस फसल की बुवाई प्रथम मौनसून के बाद जून या जुलाई में की जानी चाहिए। ग्वार की फसल के लिए 12-15 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता पड़ती है।

अच्छी पैदावार के लिए बुवाई हमेशा पंक्तियों में हल के कुंडों में अथवा सीडड्रिल की सहायता से करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सैंटीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सैंटीमीटर आदर्श मानी जाती है। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए, जिससे बीज का जमाव शीघ्र व पर्याप्त मात्रा में हो सके। किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि बुवाई कभी भी छिटकवां विधि से ना करें। इसमें समय तो कम लगता है, परन्तु उपज काफी कम मिलती है व शस्य क्रियाओं को करने में भी परेशानी होती है।

बीजोपचार : बीजों के अच्छे जमाव व फसल को रोग मुक्त रखने के लिए बीज को सबसे पहले बाविस्टिन या कैप्टान नामक फफूंदीनाशक दवा से 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। पौधों की जड़ों में गांठों का अधिक निर्माण हो व वायुमंडलीय नाइट्रोजन का भूमि में अधिक यौगिकीकरण हो, इसके लिए बीज को राइज़ोबियम व फास्फोरस सोलूबलाइजिंग बैक्टीरिया (पी.एस.बी.) कल्चर से उपचारित करना चाहिए।

उन्नत किस्में :

हरे चारे हेतु : एच.एफ.जी.-119, एच.एफ.जी.-156, ग्वार क्रांति, मक ग्वार, बुंदेल ग्वार-1 (आई.जी.एफ.आर.आई.-212-1), बुंदेल ग्वार-2, आर.आई.-2395-2, बुंदेल ग्वार-3, गोरा-80.

हरी फलियों हेतु : आई.सी.-1388, पी-28-1-1, गोमा मंजरी, एम-83, पूसा सदाबहार, पूसा मौसमी, पूसा नवबहार, शरद बहार।

दाने के लिए : मरू ग्वार, आर.जी.सी.-986, दुर्भाजय, अगेती ग्वार-111, दुर्गापुरा सफेद, एफ.एस.-277, आर.जी.सी.-197, आर.जी.सी.-417

खरपतवार एवं सिंचाई प्रबंधन : खरपतवारों की रोकथाम के लिए बुवाई के एक माह बाद एक निराई-गुड़ाई करनी चाहिए तथा बुवाई के तुरन्त बाद बासालीन 2.0 लीटर या पैंडीमेथेलिन 3.0 लीटर प्रति हैक्टेयर 600-700 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए। सामान्यत: जुलाई में बोई गई फसलों में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है, परन्तु वर्षा ना होने की दशा में सिंचित क्षेत्रों में एक सिंचाई फलियां बनते समय अवश्य करनी चाहिए।

प्रमुख कीट : ग्वार की फसल में कीटों से अधिक नुकसान नहीं होता है, फिर भी ग्वार में लगने वाले कीटों में मुख्यतया एफिड (माहू), लीफ माईनर, सफेद मक्खी, लीफ हॉपर या जैसिड व केटरपिलर हैं। ये कीट पत्तियों का रस चूस कर व इन्हें खाकर नुकसान पहुंचाते हैं। भरपूर उत्पादन हेतु इन कीटों को नियंत्रित करना बहुत ज़रुरी है। इन रस चूसक कीटों के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 0.03 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा या मिथाईल डेमेटोन 25 ई.सी. या डाईमिथोएट 30 ई.सी. 500 मिलीलीटर प्रति हैक्टेयर का छिड़काव करें।

प्रमुख रोग : ग्वार की फसल के प्रमुख रोगों में जीवाणु अंगमारी, ऑल्टरनेरिया पर्ण अंगमारी, जड़ गलन, चूर्णिल आसिता व एन्थ्रैक्नोज़ हैं। जीवाणु अंगमारी के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों की ऊपरी सतह पर धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। ये धब्बे जल्दी ही पूरी पत्तियों को ढंक लेते हैं। अत: पत्तियां गिर जाती हैं। इससे बचाव हेतु रोगरोधी किस्में बोएं एवं बुवाई से पूर्व बीज उपचार करें। स्ट्रैप्टोसाइक्लिन 100-250 पी.पी.एम. (100-250 मिलीग्राम प्रति लीटर) घोल का छिड़काव करना चाहिए।

ऑल्टरनेरिया पर्ण अंगमारी वर्षा होने के समय फसल को नुकसान पहुंचाती है। यह एक फफूंद जनित बीमारी है। इसमें पत्तियों के किनारों पर गहरे भूरे, गोलाकार व अनियमित आकार के धब्बे बन जाते हैं। परिणामस्वरूप पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और अन्तत: झड़ जाती हैं। इससे बचाव हेतु जिनेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. का 0.25 प्रतिशत का छिड़काव रोग के लक्षण प्रकट होने पर 15 दिन के अंतराल पर दो या तीन बार करें। ऐन्थ्रैक्नोज़ भी एक फफूंदी जनित रोग है। इसमें पौधों के तनों, पर्णवृन्तों और पत्तियों पर काले धब्बे बन जाते हैं। इससे बचाव हेतु जिनेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. का 0.25 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।

जड़ गलन रोग से बचाव हेतु वीटावैक्स या बाविस्टिन की 2 ग्राम या ट्राइकोडर्मा 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करने के बाद बुवाई करनी चाहिए। चूर्णिल आसिता बीमारी की रोकथाम के लिए घुलनशील गंधक (0.3 प्रतिशत) का 1 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से 15 दिनों के अंतराल पर खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए। या कैराथेन (डाइनोकेप) 0.5 प्रतिशत का घोल बना कर छिड़काव करें।

हरे चारे के रूप में ग्वार की कटाई का समय : ग्वार के हरे चारे वाली फसल की कटाई बुवाई के 50-60 दिन के बाद फूल आने की अवस्था में की जानी चाहिए। फली बनने की अवस्था में ग्वार के हरे चारे को खिलाना दुधारू पशुओं के लिए उपयोगी होता है।

ग्वार की कटाई और उपज : जब फसल पक जाए व पत्तियां पीली पड़ कर झड़ जाएं और फलियों का रंग भूसे जैसा दिखने लगे, तब ग्वार की कटाई कर लेनी चाहिए। ग्वार फसल से हरे चारे की औसत उपज 175-250 क्विंटल प्रति हैक्टेयर एवं हरी फलियों की उपज 40-60 क्विंटल प्रति हैक्टेयर और दाने की उपज 15-20 क्विंटल प्रति हैक्टेयर प्राप्त होती है। यद्यपि ग्वार फली की उपज मौसम, किस्म, मृदा के प्रकार व सिंचाई सुविधाओं पर निर्भर करती है।

एक किसान की जिद ने रच दिया इतिहास, बंजर धरती पर उगा दिया 1,000 पेड़ों का जंगल

आज जब देशभर में जंगलों की कटाई और पर्यावरण संकट चिंता का विषय बना हुआ है, वहीं छत्तीसगढ़ के दुर्ग ज़िले में एक ऐसी प्रेरक कहानी सामने आई है, जिसने साबित कर दिया कि यदि इरादे मज़बूत हों तो अकेला व्यक्ति भी प्रकृति की तस्वीर बदल सकता है।

रायपुर के पाटन ब्लॉक के निवासी 65 वर्षीय देवचरण साहू ने वर्षों की अथक मेहनत से बंजर और सूखी ज़मीन को हरे-भरे जंगल में बदल दिया। आज यहां करीब 1,000 पेड़ लहलहा रहे हैं और यह इलाका हरियाली की नई पहचान बन चुका है।

500 पेड़ काटे गए, लेकिन हार नहीं मानी

देवचरण की पर्यावरण साधना के सामने सबसे बड़ा झटका तब लगा, जब वर्ष 2012-13 में कुछ लोगों ने उनकी मेहनत से तैयार किए गए करीब 500 पेड़ काट दिए।

यह घटना किसी भी व्यक्ति का मनोबल तोड़ सकती थी, लेकिन देवचरण साहू ने हार मानने की बजाय फिर से पौधे लगाए।

उन्होंने एक बार फिर कांवड़ से पानी ढोया, पौधों की देखभाल की और उन्हें जीवित रखा। उनकी इसी जिद और समर्पण ने आज फिर पूरे क्षेत्र को हरा-भरा बना दिया।

अब चंदन के जंगल का सपना

हरियाली का यह सफर अभी थमा नहीं है। देवचरण साहू अब 108 चंदन के पौधे लगाने का लक्ष्य लेकर आगे बढ़ रहे हैं।

उनका मानना है कि आने वाली पीढ़ियों को केवल पेड़ ही नहीं बल्कि पर्यावरण संरक्षण का संदेश भी मिलना चाहिए। वह चाहते हैं कि उनका यह अभियान लोगों को प्रेरित करे और हर गांव में ऐसे हरित प्रहरी तैयार हों, जो प्रकृति की रक्षा को अपना कर्त्तव्य समझें।

सरकारी मदद नहीं, केवल जुनून बना ताकत

सबसे खास बात यह है कि देवचरण साहू ने यह काम किसी बड़े सरकारी प्रोजेक्ट या आर्थिक सहायता के भरोसे नहीं किया। सीमित संसाधनों के बावजूद उन्होंने अपने संकल्प और मेहनत के बल पर यह बदलाव संभव किया। उनकी कहानी बताती है कि पर्यावरण संरक्षण केवल सरकारी योजनाओं का विषय नहीं, बल्कि समाज के हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है।

प्रकृति को लौटाया जीवन, समाज को दिया संदेश

देवचरण सांहू की यह हरित तपस्या आज पूरे क्षेत्र के लिए प्रेरणा बन चुकी है। जहां कभी सूखी ओर बंजर ज़मीन थी, वहां आज पक्षियों की चहचहाहट, घने पेड़ों की छांव और हरियाली का संसार दिखाई देता है। उनका संदेश साफ है कि यदि हर व्यक्ति अपने जीवन में कुछ पेड़ लगाने और उनकी देखभाल का संकल्प ले, तो पर्यावरण संकट से काफी हद तक मुकाबला किया जा सकता है। उनकी यह कहानी केवल एक व्यक्ति की सफलता नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति समर्पण, धैर्य और अटूट विश्वास की मिसाल है।

सरकारी मदद नहीं, केवल जुनून बना ताकत

सबसे खास बात यह है कि देवचरण माहू ने यह काम किसी बड़े सरकारी प्रोजेक्ट या आर्थिक सहायता के भरोसे नहीं किया। सीमित संसाधनों के बावजूद उन्होंने अपने संकल्प और मेहनत के बल पर यह बदलव संभव किया। उनकी कहानी बताती है कि पर्यावरण संरक्षण केवल सरकारी योजनाओं का विषय नहीं, बल्कि समाज के हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है।

Crop® Chemicals
बेहतर गुणवत्ता
बेहतर फसल
CONTACT: 8288014051 | 9216103075 | 9216103069

भारत दुनिया का 9वां बड़ा वन क्षेत्र वाला देश

- भारत के 25 प्रतिशत से ज्यादा भूमि पर वन है। हम दुनिया के नौवें सबसे बड़े वन क्षेत्र वाले देश हैं।
- चीन और ऑस्ट्रेलिया के बाद हम सबसे तेज़ी से वन क्षेत्र बढ़ाने वाले देशों में तीसरे नंबर पर आते हैं।
- देश के कुल हरित आवरण में 1,12,014. 34 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र ऐसे ट्री कवर का है, जो जंगलों से बाहर है।
- 5 जून, 2024 से 'एक पेड़ मां के नाम' के तहत अब तक देश में 262.4 करोड़ पौधे लगाए गए है।

2.66 लाख हैक्टेयर वन क्षेत्र भारत हर साल अपनी ज़मीन में जोड़ता है।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें
खेती संदेश
हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

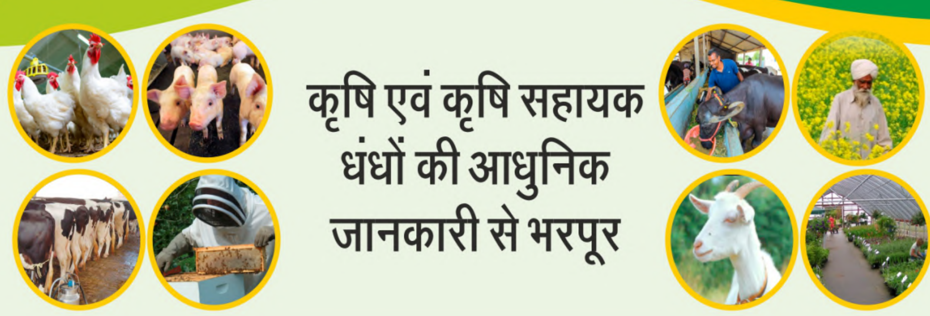

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर
एक वर्ष में 52 अंक
किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए
चंदों में विशेष छूट
एक वर्ष 500/- रुपए
दो वर्ष 800/- रुपए
पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :
90410-14575
KHETI DUNIYAN
TID - 62763351
चंदे भेजने हेतु QR कोड स्कैन करें।
खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

चम्बा की 'खुंड वन बीट' में मिला दुनिया से विलुप्त हो रहा 'कस्तूरी हिरण'

दुर्लभ प्रजाति के वन्य जीवों के लिए सुरक्षित चम्बा के जंगल

चम्बा के जंगल दुर्लभ प्रजाति के वन्य जीवों के लिए सुरक्षित स्थान बन रहे हैं। जनजातीय क्षेत्र भरमौर के तुंदाह वन्य प्राणी क्षेत्र व पांगी के सेचू नाला वन्य प्राणी अभयारण्य क्षेत्र में दुर्लभ प्रजाति वाले कस्तूरी हिरण के बाद अब भरमौर की खुंड बीट में कस्तूरी हिरण की तस्वीरें विभाग ने कैद की है। यह विभाग के लिए बड़ी उपलब्धि है। वन्य प्राणी विभाग ने क्षेत्र में वन्य जीवों का पता लगाने के लिए सर्वे करवाया था।

वन विभाग में कार्यरत एम.पी.डब्ल्यू. विनय कुमार ने खुंड बीट में तस्वीर को कैद किया है। अब वन्य जीवों के दिखने के बाद विभाग उनके संरक्षण को लेकर अपनी रूप-रेखा बनाने में जुट गया है। दुर्लभ प्रजाति के वन्य जीवों के लिए चम्बा के जंगल सुरक्षित स्थान बन रहे हैं। इसके प्रमाण हाल ही में वन्य प्राणी विभाग के सर्वे में देखने को मिले हैं। विभाग ने क्षेत्र के फील्ड स्टाफ को दुर्लभ कस्तूरी हिरण के संरक्षण के निर्देश दिए हैं।

अटलांटिक के ठंडे पानी से मौनसून में बदलाव

एक नई रिसर्च से पता चलता है कि उत्तरी अटलांटिक महासागर में पानी के एक ठंडे हिस्से ने जेट स्ट्रीम हवाओं के जरिए भारतीय गर्मियों के मौनसून में बदलाव शुरू

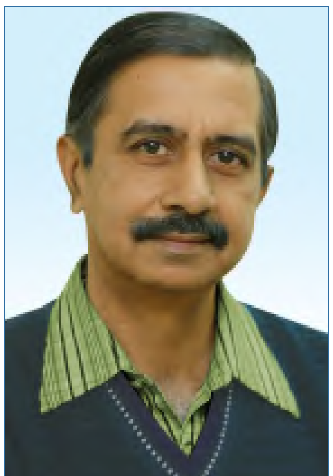

मुकुल व्यास

कर दिए हैं। इससे करोड़ों लोगों की रोजी-रोटी को खतरा पैदा हो गया है।

मौनसून हमारी जीवन रेखा है। भारत और दक्षिण एशिया के दूसरे हिस्सों में 1 अरब से अधिक लोग खाद्य सुरक्षा और आर्थिक स्थिरता के लिए मौनसून पर निर्भर है। हर साल हम एक अच्छे मौनसून की प्रतीक्षा करते हैं। लेकिन वैज्ञानिकों ने पाया है कि पिछले कुछ वर्षों से भारतीय मौनसून के पैटर्न में परिवर्तन हो रहा है। वैज्ञानिक इस बदलाव के कारणों को जानने की कोशिश कर रहे हैं। अब एक नई रिसर्च से पता चलता है कि उत्तरी अटलांटिक महासागर में पानी के एक ठंडे हिस्से ने जेट स्ट्रीम हवाओं के जरिए भारतीय गर्मियों के मौनसून में बदलाव शुरू कर दिए हैं। इससे करोड़ों लोगों की रोजी-रोटी को खतरा पैदा हो गया है। वैज्ञानिकों का कहना है कि इन दोनों प्रणालियों के बीच का संबंध एक ऐसे पहले से अज्ञात संबंध को दिखाता है जो दक्षिण एशिया में मौसम के अनुमानों को जानकारी दे सकता है और दूसरी जगहों पर मौसम की घटनाओं पर रोशनी डाल सकता है।

ध्यान रहे कि जेट स्ट्रीम हवाएं पृथ्वी के वायुमंडल में 9 से 16 किलोमीटर की ऊंचाई पर बहने वाली तेज गति वाली, संकरी वायुधाराएं हैं। तापमान के अंतर और पृथ्वी के घूर्णन से संचालित ये हवाएं वायुमंडलीय सीमाओं के रूप में कार्य करती हैं जो वैश्विक मौसम के पैटर्न को आकार देती हैं और वाणिज्यिक विमानन मार्गों को प्रभावित करती हैं।

भारतीय गर्मियों का मौनसून वर्षा का एक पैटर्न है जो जून से सितंबर तक रहता है और यह गर्म उत्तरी हिंद महासागर और भूमध्य रेखा के नीचे ठंडे समुद्री पानी के बीच तापमान के अंतर से चलता है। शुरू में, मौनसून ने भारत के पश्चिमी तट और उत्तरी भारत के एक बड़े इलाके (गंगा के मैदान) में भारी बारिश शुरू की थी। लेकिन 1999 से यह पैटर्न बहुत बदल गया है। शोधकर्ताओं ने एक नए अध्ययन में पाया कि उत्तर-पश्चिम भारत में अब मौनसून सीजन में 1999 से पहले के मुकाबले लगभग 25 प्रतिशत ज्यादा बारिश होती है, जबकि गंगा के मैदानी इलाकों में लगभग 4 प्रतिशत कम बारिश होती है।

इस अध्ययन के पहले लेखक और भारतीय विज्ञान संस्थान के जलवायु वैज्ञानिक महेंद्र निम्माकांति ने कहा कि यह परिवर्तन किसानों के लिए खास तौर पर बहुत बुरा है, क्योंकि उनके खेतों की मिट्टी और फसलें बारिश के पुराने पैटर्न के हिसाब से ढल गई हैं। उन्होंने कहा कि भारत काफी हद तक खेती पर निर्भर है। उत्तर-पश्चिम भारत में सामान्य से अधिक बारिश होने पर अचानक बाढ़ आ जाती है और फसलों का नुकसान होता है, क्योंकि इस इलाके की खेती सूखे हालात के हिसाब से ढल गई है। इस बीच, गंगा के मैदानी इलाकों में सूखे के दौर भी आए हैं, जिससे फसलों में भी कमी आई है और किसानों की रोजी-रोटी पर असर पड़ा है।

पिछले अध्ययनों ने भारतीय मौनसून में परिवर्तन को अटलांटिक मेरिडियनल ओवरटर्निंग सर्कुलेशन (एएमओसी) में बदलाव से जोड़ा था। एएमओसी अटलांटिक में समुद्री धाराओं का एक बड़ा जाल है जो वैश्विक जलवायु को नियमित करता है और उत्तरी गोलार्द्ध में गर्मी पहुंचाता है। आंकड़े बताते है कि

> “एक नई रिसर्च से पता चलता है कि उत्तरी अटलांटिक महासागर में पानी के एक ठंडे हिस्से ने जेट स्ट्रीम हवाओं के जरिए भारतीय गर्मियों के मौनसून में बदलाव शुरू कर दिए हैं। इससे करोड़ों लोगों की रोजी-रोटी को खतरा...”

जलवायु परिवर्तन की वजह से एएमओसी धीमा हो रहा है और उत्तरी अटलांटिक महासागर में पहले के मुकाबले कम गर्मी छोड़ रहा है। निम्माकांति ने कहा कि इन अध्ययनों में यह नहीं बताया गया कि भारतीय मौनसून कैसे बदल सकता है। इसके पीछे के तंत्र को भी विस्तार से नहीं समझाया गया। उन्होंने कहा, ये अध्ययन आम तौर पर यह समझाते हैं कि अगर एएमओसी कमजोर होता है, तो यह भारतीय मौनसून को भी कमजोर करता है।

एक बड़ी समस्या यह है कि मौजूदा जलवायु मॉडल भारतीय मौनसून में हुए बदलावों को नहीं दिखाते हैं, क्योंकि वे उत्तरी अटलांटिक महासागर की सतह के तापमान में बदलाव को भी पूरी तरह से ग्रहण नहीं करते हैं। इन मॉडलों ने ग्रीनलैंड के दक्षिण-पूर्व में एक अत्यंत ठंडे क्षेत्र पर गौर नहीं किया जिसे 'कोल्ड ब्लॉब' के नाम से जाना जाता है, जहां 1901 और 2021 के बीच पानी 1800 के दशक के आखिर की तुलना में ज्यादा ठंडा था। कोल्ड ब्लॉब बताता है कि एएमओसी कमजोर हो रहा है क्योंकि यह उत्तरी अटलांटिक तक पहुंचने वाली गर्मी की मात्रा में कमी की ओर इशारा करता है।

यह पता लगाने के लिए कि भारतीय मानसून कैसे और क्यों बदला है, शोधकर्ताओं ने दर्जनों जलवायु मॉडलों में बारिश का डेटा, समुद्र की सतह के तापमान के रिकॉर्ड और असल जिंदगी के दूसरे अवलोकन डाले। इसने पिछले 27 सालों में देखे गए बदलावों को फिर से दिखाया। इन नतीजों से उत्तरी अटलांटिक में हुए बदलावों और मानसून में बदलावों के बीच संबंध का पता चला। यह जानने के लिए क्या उत्तरी अटलांटिक समुद्र की सतह के तापमान की वजह से भारतीय मानसून अजीब तरह से बर्ताव कर रहा है, टीम ने एक सिमुलेशन (कंप्यूटर पर परिस्थितियों की नकल) में कोल्ड ब्लॉब को जोड़ा और हटाया।

नतीजों से पता चला कि ठंडे ब्लॉब ने उत्तरी अटलांटिक पर एक मजबूत टेम्परेचर ग्रेडिएंट (तापमान में परिवर्तन की दर और दिशा का पैमाना) बनाकर भारतीय मानसून को शिफ्ट कर दिया है, जो बदले में यूरेशिया के ऊपर वायुमंडल में जेट स्ट्रीम हवाओं और प्रेशर सिस्टम पर असर डालता है। खासकर, उत्तरी अटलांटिक के ऊपर जेट स्ट्रीम तेज हो गई है, और पश्चिमी रूस में यूराल पहाड़ों के ऊपर एक 'ब्लॉकिंग' सिस्टम मजबूत हो गया है। इसके परिणामस्वरूप भारत में मौसम सिस्टम बदल गए हैं, जो नमी वाली हवा को देश के उत्तर-पश्चिम की ओर ले जा रहे है और उसे दूसरे इलाकों से दूर खींच रहे हैं।

एजीयू एडवांसेज जर्नल में छपे नए नतीजों से मौसम का अनुमान लगाने वालों को भारत और पड़ोसी देशों में मौनसून के दौरान बहुत ज्यादा बारिश और सूखे जैसी घटनाओं का अनुमान लगाने में मदद मिल सकती है। कुछ शोधकर्ताओं का मानना ध्है कि भारतीय मौनसून वैश्विक जलवायु में एक निर्णायक बिंदु (टिपिंग प्वाइंट) है, और इन निष्कर्षों से पता चलता है कि यह सिस्टम 1999 में एक अहम सीमा पार कर गया था। तब से कोल्ड ब्लॉब की वजह से जेट स्ट्रीम में लगातार बदलाव हुआ है, जिससे मौनसून में अचानक बदलाव आए है। अभी यह साफ नहीं है कि तेजी से बदलती जलवायु में भारतीय मौनसून कैसे बदलेगा, क्योंकि जलवायु मॉडल उत्तर अटलांटिक के बारे में अलग-अलग अनुमान लगाते है, और दुनिया के बदलने के साथ-साथ दूसरे कारण भी असर डाल सकते हैं।

लेखक विज्ञान मामलों के जानकार हैं।

सामान्य से कम बारिश ने बढ़ायी किसानों की चिंता

पानीपत में धान के पौधों का निरीक्षण करते के.वी.के. ऊझा के समन्वयक डॉ. सतपाल सिंह।

पानीपत ज़िले में 5 हज़ार एकड़ क्षेत्र में धान की रोपाई बाकी

पानीपत जिले में इस खरीफ सीजन के दौरान धान की रोपाई लगभग अंतिम चरण में पहुंच गई है। कृषि विभाग के अनुसार इस वर्ष 1.80 लाख एकड़ में धान की रोपाई का लक्ष्य रखा गया था, जिसमें से अब तक करीब 1.75 लाख एकड़ में रोपाई पूरी हो चुकी है। सामान्य से कम बारिश के कारण अभी भी लगभग 5 हजार एकड़ क्षेत्र में रोपाई बाकी है। हालांकि सोमवार को हुई बारिश किसानों के लिए राहत लेकर आई है।

कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) ऊझा के समन्वयक डॉ. सतपाल सिंह ने बताया कि पहले कम बारिश के कारण धान की फसल में पत्ता लपेट सुंडी का प्रकोप बढ़ रहा था, लेकिन हालिया बारिश से यह कीट काफी हद तक समाप्त हो गया है। ऐसे में किसानों को इस कीट के नियंत्रण के लिए अब कीटनाशक स्प्रे करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

उन्होंने बताया कि जिले के कई क्षेत्रों में हाईब्रिड और गैर-बासमती धान की फसल में तना छेदक, बौने और बकाने पौधों की समस्या देखी जा रही है। किसानों को सलाह दी गई है कि ऐसे पौधों को उखाड़कर खेत में गड्ढा खोदकर दबा दें, क्योंकि इन पर बालियां नहीं आतीं और ये फसल के पोषक तत्वों की अनावश्यक खपत करते हैं।

डॉ. सतपाल सिंह ने किसानों से धान की फसल का नियमित निरीक्षण करने और किसी भी रोग या कीट की पहचान के बाद ही कृषि विशेषज्ञों की सलाह अनुसार दवा का छिड़काव करने की अपील की। उन्होंने कहा कि बिना आवश्यकता के अंधाधुंध कीटनाशकों का प्रयोग फसल और किसानों, दोनों के लिए नुकसानदायक हो सकता है।

किसानों के लिए एडवाइजरी जारी, स्वांक नियंत्रण के लिए डालें सिफारिशी दवा

रोपाई करने के पहले दो सप्ताह फसल में जमा रखें पानी

धान की रोपाई करने के बाद पहले दो सप्ताह तक खेत में लगातार पानी जमा रखें, ताकि पौधों की जड़ पकड़ बना सके। इसके बाद खेत का पानी पूरी तरह ज़मीन में समा जाने के दो दिन बाद ही सिंचाई करें। स्वांक एवं धान की मोथा के प्रभावी नियंत्रण के लिए रोपाई के 20-25 दिन बाद प्रति एकड़ 100 मिलीलीटर नोमिनी गोल्ड 10 एस.सी. (बिसपाइरिबैक) को 150 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। यदि फसल में लेप्टोक्लोआ (चीनी घास) तथा कांकी का प्रकोप हो, तो रोपाई के 20-25 दिन बाद प्रति एकड़ 400 मिलीलीटर राइसस्टार 6.7 ई.सी. (फेनोक्साप्रॉप) को 150 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। खड़े पानी में शाकनाशी का छिड़काव न करें तथा छिड़काव के एक दिन बाद सिंचाई करें।

लुधियाना स्थित पंजाब खेतीबाड़ी यूनिवर्सिटी ने धान की खेती के लिए एडवाइजरी जारी की। इसके अनुसार, चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए रोपाई के 20-25 दिन बाद प्रति एकड़ अलग्रिप 20 डब्ल्यू.

जी. 30 ग्राम या सनराइस 15 डब्ल्यू.डी.जी. 50 ग्राम या लोंडेक्स 60 डी.एफ. 40 ग्राम या सेगमेंट 50 डी.एफ. 16 ग्राम या अलमिक्स 20 डब्ल्यू.पी. 8 ग्राम या नोविक्सिड 3.25 ओडी 500 मिलीलीटर या एकेत्सु 43 डब्ल्यू. जी. 40 ग्राम को 150 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। छिड़काव से पहले खेत से खड़ा पानी निकाल दें तथा एक दिन बाद सिंचाई करें। छिड़काव साफ और शांत मौसम में करें।

रोपित धान में 30 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ की दूसरी एवं तीसरी खुराक क्रमश: रोपाई के 3 तथा 6 सप्ताह बाद दें। कम अवधि वाली किस्मों जैसे पी.आर.-126 में तीसरी खुराब रोपाई के 5 सप्ताह बाद दें।

धान में बौनेपन (ड्वार्फिंग) रोग से बचाव के लिए रोग ग्रस्त पौधों को प्रारंभिक अवस्था में ही उखाड़ कर उचित तरीके से नष्ट करें, जैसे कि उन्हें मिट्टी में गहराई से दबा दें।

इस रोग के प्रारम्भिक संक्रमण एवं आगे फैलाव की रोकथाम के लिए नर्सरी और खेतों का नियमित निरीक्षण करें। सफेद पीठ वाले फुदकों (व्हाइट-बैक्ड प्लांट हॉपर) की उपस्थिति मिले, तो प्रति एकड़ 100 लीटर पानी में फ्लोनिकामिड (उलाला 50 डब्ल्यू.जी.) 60 ग्राम या डिनोटेफ्युरॉन (टॉकन / ओशीन / डॉमिनेंट 20 एम.जी.) 80 ग्राम या पाइमेट्रोजीन (चेस 50 डब्ल्यू. जी.) 120 ग्राम का छिड़काव करें। रसायनों एवं उर्वरकों का प्रयोग क्षेत्र में संभावित वर्षा को ध्यान में रखते हुए करें।

पूसा बासमती–1509 : रोपाई के तीन सप्ताह बाद 9 किलो यूरिया डालें

सी.एस.आर.-30 तथा पूसा बासमती-1509 की रोपाई के तीन सप्ताह बाद पहली आधी मात्रा के रूप में यूरिया का प्रयोग करें। प्रति एकड़ सी.एस.आर.-30 में 9 किलोग्राम यूरिया, पूसा बासमती-1121, पंजाब बासमती-7, पंजाब बासमती-5, पूसा बासमती-1637 तथा पूसा बासमती-1718 में 18 किलोग्राम यूरिया तथा पूसा बासमती-1509 में 27 किलोग्राम यूरिया डालें। यदि गेहूं की फसल में फास्फोरस (पी) की अनुशंसित मात्रा पहले ही दी जा चुकी है, तो बासमती में फास्फोरस उर्वरक का प्रयोग न करें।